॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-धरमरथ

अबेर्दर (केन्या)

सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।
सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।।

|| रामकथा ||
मानस-धरमरथ

मोरारिबापू

अबेर्दर (केन्या)

दिनांक : १८-०७-२०१५ से २६-०७-२०१५

कथा-क्रमांक : ७८०

प्रकाशन :
सितम्बर, २०१६

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स
स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू की रामकथा 'मानस-धरमरथ' अबेर्दर (केन्या) में दिनांक १८-७-२०१५ से २६-७-२०१५ दरमियान सम्पन्न हुई। अषाढी बीज-रथयात्रा के दिन प्रारंभ हुई इस रामकथा में बापू ने 'मानस' अन्तर्गत धर्मरथ के रूपक का विशिष्ट दर्शन व्यक्त किया।

'रामचरित मानस' के 'लंकाकांड' में धर्मरथ का रूपकात्मक परिचय देते हुए भगवान राम विभीषण को कहते हैं कि जिससे विजयश्री प्राप्त होती है वह रथ अलग ही होता है। और ऐसे धर्ममय रथ को जगत में कोई नहीं जीत सकता। धर्मरथ के दो पहियें होते हैं शौर्य और धर्म। सत्य धर्मरथ की धजा है और शील उसकी पताकायें है। धर्मरथ के चार घोड़ें है - बल, बिबेक, दम और परहित। और इन चार घोड़ेंवाला धर्मरथ क्षमा, कृपा और समता की रज्जु से जुड़ा हुआ है। परमात्मा का भजन धर्मरथ का सारथि है। तुलसीदासजी ने यूं जो धर्मरथ का वर्णन किया है उसका विशद और विशिष्ट विवरण बापू ने तात्त्विक परिप्रेक्ष्य में किया।

मोरारिबापू ने महाभारत के कुरुक्षेत्र-धर्मक्षेत्र के रथ एवं 'रामचरित मानस' के धर्मरथ का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए ऐसा निष्कर्ष भी दिया कि कुरुक्षेत्र के रथ के सारथि श्रीकृष्ण है और रामकथा के रथ का सारथि ईश नहीं, ईश-भजन है। साथ ही बापू का कहना हुआ कि ईश्वर जब सारथि बनता है तो उसका पांच दायित्व है, जब कि भजनरूपी सारथि सात दायित्व निभाता है। जिसने भजन किया उनको सात प्रकार से रक्षा मिले। भजन हमारी इन्द्रियों को संतुलित रखता है। भजन सारथि बने तो हम लक्ष्य चुकते नहीं। भजन सारथि बने तो रथी का ध्यान रखता है। चौथा दायित्व, भजनरूपी सारथि भरणपोषण करे। और पांचवां, भजन सारथि होता है तब हमें सावधान कर देता है। छठ्ठा दायित्व है, भजनरूपी सारथि सबको मिला दे। और भजन जिसके रथ का सारथि हो उसका सातवां दायित्व है, भजनानंदी को कलंक न लगने दे।

सुविदित है कि इससे पूर्व बापू ने धरमरथ के संदर्भ में पांच कथा का गान किया है। केन्या की इस रामकथा के माध्यम से व्यासपीठ से पुन: एक बार धरमरथ के बारे में कुछ नया ही दर्शन व्यक्त हुआ। साथ ही सांध्य उपक्रम अंतर्गत अफ्रिका की भूमि में गुजरात-सौराष्ट्र के कवि-कलाकार एवं हिन्दी शायरों की अविस्मरणीय कलाप्रस्तुति भी हुई।

- नीतिन वडगामा

राम साक्षात् धरमरथ है

'बालकांड' बहाना है निर्गुण को सगुण रूप में पेश करने का। 'अयोध्याकांड' बहाना है भरतरूपी सागर को मंथन करके भरत में से प्रेम का अमृत निकालकर जगत को बांटने का। 'अरण्यकांड'; आखिरी व्यक्ति भी भक्ति का अधिकारी है, ये वैश्विक मेसेज देने का एक बहाना था। 'किष्किन्धाकांड' बहाना है हनुमंतदर्शन का। 'सुन्दरकांड' बहाना है व्यक्ति को भक्ति की खोज करने का। 'लंकाकांड' बहाना है विश्व के सामने धर्मरथ पेश करने का। 'उत्तरकांड' बहाना है कागभुशुंडि का वैज्ञानिक दर्शन प्रस्तुत कराने का।

सुनहु सखा कह कृपानिधाना।
जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।
सखा धर्ममय अस रथ जाकें।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।।

बापू, 'रामचरित मानस' के सत्य के कारण व्यासपीठ के प्रेम के कारण और त्रिभुवनगुरु महादेव की करुणा के कारण अषाढी बीज, भगवान जगन्नाथ की रथयात्रा के परमपावन दिन आज हम इकठ्ठे हुए हैं। केवल 'मानस' का सत्य, व्यासपीठ का प्रेम और त्रिभुवन महादेव की करुणा यही एकमात्र कारण है कि फिर एकबार केन्या की भूमि पर हम रामकथा के नाते मिल रहे हैं। आप सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

इस कथा के पीछे कौन प्रवाह काम कर रहे हैं? एक बहुत समर्पित परिवार जो व्यासपीठ के लिए समर्पित है। अब तो वो व्यक्ति रही नहीं, रमाबेन जसाणी; उनका परिवार और ये टीनिया, भगवद्कृपा से उनके भाग में कई कथायें आई। विशिष्ट कथा का वो निमित्त बना। मेरी खुशी होती है। आप सब आये, उसकी खुशी के बारे में क्या कहूं? केन्या लास्ट टाईम कुछ-कुछ विद्या के हमारे अतिथिगण आये थे। इस बार आदरणीय वडील मुरब्बीश्री रघुवीरभाई चौधरी से लेकर हमारे समृद्ध गुजराती साहित्य जो है हम सबका, उसी विद्या के कई गुजराती भाषा के उपासक, हमारी भाषा के जतन करनेवाले सब आये हैं। गीर के झोंपडे में पड़ा साहित्य, वहीं से लेकर लोकसाहित्य के बिलग-बिलग विद्या के कई उपासक आज इस कथा में आये हैं। मेरी विनंती और मेरे आदर पर ये बुझर्ग शायर विज्ञानव्रत, दनकौरीसाहब सब आये।

संतवाणी विभाग से सब आये। लोकसाहित्य में भी कई प्रकार के विभाग से सब आये। देवीपूजक एक लड़का आया है वहीं से लेकर देवीपुत्र लाभुदादो अमारो, मायो भाई, सब आये हैं। साहित्य के, सूर के, स्वर के उपासक सब इकठ्ठे होते हैं तब मैं क्या कहूं मेरी खुशी! ये राधाकृष्ण मंडळी! तो बहुत विद्यायें इकठ्ठी हुई। केवल अस्तित्व की कृपा। ईद का त्यौहार गया है, सबको ईद मुबारक हो। और समस्त विश्व को आज जगन्नाथ रथयात्रा के दिन की बहुत-बहुत शुभकामना और बधाई। कच्छनुं तो नवुं वरस। आज रामदेवपीर की पीराई का दिन। आप सब आये हैं। मेरी व्यासपीठ की ओर से सबका स्वागत है।

मुझे आज एक अखबार से तो माहिती मिली कि विदेश में यह मेरी एक सौ आठवीं रामकथा है। जो प्रारंभ भी केन्या से हुआ और आज एक माला पूरी हो रही है, केन्या की भूमि पर। सेवन्टी सिक्स में आया पहले 'रामायण' लेकर यहां अकेला तब से लेकर। और परमस्नेही नीतिनभाई वडगामा की पंक्ति सतत याद रहती है कि 'पोथीने परतापे क्यां क्यां पूगियां!' नहींतर आपणुं शुं गजु? तो आज ये भी योग है एक सौ आठवीं कथा का। एक माला पूरी हो रही है।

कौन विषय पर आपसे संवाद करूं? आज रथयात्रा का दिन है। आज किसी एक कोम की नहीं, जगत के नाथ की रथयात्रा है; परम सत्ता की रथयात्रा का दिन है, तो मैंने सोचा, ये मेरा मनोरथ था, मेरे मन में पडा है, मैं एक बार और 'मानस-धरमरथ' पर गाऊं, आपसे बातें करूं। फिर एक बार बीस साल के बाद 'मानस-धरमरथ' पर गाने का मन हो रहा है। आप 'रामचरित मानस' के जानकार है, अभ्यासी है, फिर भी एक भूमिका दे दूं कि प्रसंग है 'लंकाकांड' का। 'लंकाकांड' के रणमेदान में, युद्धभूमि में रावण जब रथ में बैठकर राम के साथ युद्ध करने के लिए आता है। कुंभकर्ण की वीरगति हो चुकी है। इन्द्रजित का निर्वाण हो चुका है। क्रमश: बड़े-बड़े वीरपुरुष निर्वाण को उपलब्ध हुए हैं और फिर रावण मेदान में आता है। जैसा रावण युद्ध के मेदान में राम के सामने आया; वीरपुरुष के हाथ से जब शस्त्र गिर जाय तो अशगुन है। रावण मेदान में आया तो उसके हाथ से हथियार गिरने लगे। और तुलसी कहते हैं, ये आदमी शगुन-अशगुन को गिनता नहीं। कारण अति गर्व! अतिशय गर्व के कारण अशगुन गिनता नहीं।

मैं कोशिश करूंगा, ये धर्मरथ के करीब-करीब नवों रस है। वीररस का वातावरण है। तुलसी लिखते हैं, भेरी न फिरी और शहनाई जो सुखद राग है वो मारु राग बजा रहे हैं। मारु राग में तीन वाद्य बज रहे हैं। पूरा रणमेदान रागमय बन गया है। कौन-से अपशुकन हुए? रथ से सुभट गिरने लगे! घोड़ें और गज चिल्लाने लगे और साथ छोड़कर ये हयदळ-गजदळ भागने लगे! तुलसीदासजी मानो देख-देखकर लिख रहे हैं! गोमायु, गोमायु मानी शियाळ, गीध, कौआ, गधा अनेक प्रकार की आवाज़ करने लगे! सब अशगुन। और सबसे ज्यादा काल का साक्षात् दूत घुवड भयंकर वचन बोल रहे हैं। लेकिन इनमें से एक भी अशगुन की परवा किये बिना रावण मैदान में आता है और कहता है कि ये दोनों भाईयों को मैं देख लूंगा! तुम दूसरों के साथ लड़ो, ऐसा कहकर गर्व से आता है। सब अपनी-अपनी जोड़ी के सामने भीड रहे है। मैं शस्त्रवादी आदमी नहीं हूं। युद्ध, शस्त्र, संहार, हिंसा ये मेरी मानसिकता में बैठता नहीं है। और गाता हूं 'मानस।' और राम-रावण का युद्ध कैसा? तो राम-रावण युद्ध जैसा। उसकी तुलना में कोई युद्ध का वर्णन नहीं है। कुरुक्षेत्र भी छोटा पड़ता है! बहुत बड़ा युद्ध खेला गया। और मैं वो कथा कहता हूं जो मेरी मानसिकता से विरुद्ध है। लेकिन मुझे मेरे गुरु ने सिखाया कि बेटा, 'लंकाकांड' तो बहाना था, क्योंकि ठाकुर ने जगत को धर्मरथ देना था। बहाना खोजता आया अस्तित्व।

मैं आपसे एक निवेदन करना चाहता हूं कि कुरुक्षेत्र के रणमेदान में बहुत बडा संहार हुआ। क्या

भगवान कृष्ण ये युद्ध नहीं रोक सकता था? जिसको हम प्रभु कहते हैं; प्रभु का एक अर्थ होता है समर्थ। और समर्थ हम उसको कहते हैं कि जो करने योग्य हो वो भी कर सकता है, जो करना न करना सब कर सकता है। कर्तुम्, अकर्तुम्, आदि-आदि जो सबकुछ कर सकता है उसको हम समर्थ कहते हैं। शास्त्रीय बोली में क्या कृष्ण ये नहीं कर सकता था? लेकिन कृष्ण के मन में रहा होगा कि संहार जितना हो जाय, लेकिन ये नियति होगी, बनके रहेगी। लेकिन समयांतर काल के बाद एक तराजु में जितना संहार हुआ था वो संहार रख दिया जाय और कुरुक्षेत्र के 'मध्ये महाभारत' उसमें जो 'भगवद्गीता' ने जो उद्धार किया वो रख दिया जाय तो उद्धारवाला पलड़ा भारी है, संहारवाला पलड़ा हलका है। तो शायद कुरुक्षेत्र का युद्ध बहाना था 'भगवद्गीता' देने के लिए। अस्तित्व खोजता है बहाना। मेरे दादाजी ने बताया था, बेटा, 'लंकाकांड' का घमासान युद्ध एक बहाना था धर्मरथ विश्व को देने के लिए। 'बालकांड' बहाना है बाप, निर्गुण को सगुण रूप में पेश करने का। परम सत्ता को मानवीय रूप देकर मानव और मानव से जुड़े सभी जड़-चेतन को उद्धार के लिए एक बहाना है 'बालकांड', क्योंकि निराकार को नराकार करना था। फिर 'अयोध्याकांड' में जाता हूं तो सोचता हूं, 'अयोध्याकांड' एकमात्र बहाना है, किसका? भरतरूपी सागर को मंथन करके भरत में से प्रेम का अमृत निकालकर जगत को बांटना था। प्रेमामृत भरत सिंधु से निकालने के लिए सिर्फ़ बहाना था। 'अरण्यकांड' में जाता हूं तो मुझे लगता है कि वो भी नव प्रकार की भक्ति सरल से सरल व्यक्ति कर पाये; आखिरी व्यक्ति भी भक्ति का अधिकारी है, ये वैश्विक मेसेज देने का एक बहाना था 'अरण्यकांड।' ये न होता तो नवधा भक्ति -

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरी रति मम कथा प्रसंगा।।

'किष्किन्धाकांड' बहाना है हनुमंतदर्शन का। 'किष्किन्धाकांड' न होता तो 'बुद्धिमतां वरिष्ठम्' का परिचय हमें न मिलता। 'किष्किन्धा' बहाना है हनुमंतप्रवेश का। 'सुन्दरकांड' बहाना है व्यक्ति को भक्ति की खोज करने का, एक मारग दिखाने का कि सब अपनी-अपनी सीता को खोजे। करीब-करीब सबकी सीता क्षमा के रूप में, शक्ति के रूप में, करुणा के रूप में, किसी न किसी रूप में, किसी न किसी रावण के थ्रू चुरा ली गई है। और उसकी पुन: खोज होती रहती है। ये खोज रुकनेवाली नहीं है। इसीलिए 'रामायण' प्रत्येक काल में प्रासंगिक रहेगा।

'रामचरित मानस' का ये अद्‌भुत प्रसंग, जब जानकीजी का अपहरण रावण करे ये योजना जो राघव ने बनाई। जिसको गोस्वामीजी शीर्षक देते हैं ललित नरलीला। तब सीता को कहा कि -

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।
लगि करौं निसाचर नासा।।

तो, लक्ष्मणजी फल-फूल लेने बाहर गये हैं। सीताजी को कहा, आप अपना ये स्वरूप अग्नि में समाविष्ट कर दो। सीता पराम्बा है। जानकी जो असली सीता है वो समा गई अग्नि में। कथा कहती है, रावण छाया को, छाया सीता को लेकर विमान में गया। मैं सोचता रहता हूं कि असली भक्ति को अग्नि में ही रहना पड़ता है, नकली आकाश में उड़ती है! सीता भक्ति है। तुलसी ने चित्रकूट की झांकी में बताया कि भक्ति सीता और राम कैसे दिखते हैं? मानो सच्चिदानंद राम बैठे हैं और सीता भक्ति स्वरूपा बैठी है। तो सबकी सीता क्षमा के रूप में, सहनशक्ति के रूप में किसी न किसी रावण के द्वारा चुरा ले गई है! और मूल जो हमारी शक्ति है उसको प्राप्त करने के लिए बहाना है 'सुन्दरकांड।' जिसमें जानकीजी खोज की गई।

'लंकाकांड' बहाना है विश्व के सामने धर्मरथ पेश करने का। स्मृतिकार ने धर्म के दश लक्षण गिनाये। लेकिन तुलसी ने यहां ग्यारह पंक्ति में धर्म की चर्चा की है। मेरी कथा धर्मशाला नहीं, एक प्रयोगशाला है। कुछ

फलित हो। किसी चिंतक का सूत्र है, फल की चिंता नहीं करनी चाहिए, फल की उत्सुकता होनी चाहिए। मेरी कथा तो प्रेमयज्ञ है। उसमें सबकी आहुति होनी चाहिए। मैं कोई पीटिपीटाई परंपरा में चलनेवाला आदमी नहीं हूं। इसीलिए वोशिंग्टन में मैंने नया प्रयोग शुरू किया, बीच में से श्रोताओं को खड़ा करता था कि मैं एक घंटा बोला इसमें से आपको कुछ पूछना है तो पूछो। मैंने पाश्चात्य जगत में पहली कथा वानकुंवर में की। यहां पूरा दिन वहां पूरी रात! इतना डिफरन्स। घरधणी सब जोब करे। शाम को कथा। मुझे अकेला घर में छोड़ देते थे। मुझे तो एकांत अच्छा लगता है। बोले, बापू, एक पहाडी है, मैंने कहा, वहां मुझे सुबह छोड़ दो, शाम को आप लौटो तब ले जाना। तो सा'ब, मुझे वो पहाडी पर छोड़ देते थे। मैं ये गाता रहता था अकेला। ये भूमि मुझे याद है।

न मृत्युर्नशंका न मे जातिभेद:
पिता नैव मे नैव माता च जन्म ।
न बंधुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्य:
चिदानंदरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम् ।।

तो, मेरा ये अनुभव किसी प्रसंगवश कह रहा था वोशिंग्टन में, तो मेरा श्रोता जिसने कथा का आयोजन किया था, मैंने पूछा, किसी को पूछना है? तो उसने कहा, मुझे पूछना है कि आप वानकुंवर में कथा करते थे। आपको घर में अकेला छोड़कर परिवार चले जाते थे तो आप खाना खाने के बाद बर्तन धोते थे? मैंने कहा, मैं मेरा वर्तन धोता था! बर्तन नहीं!

कभी कोई शंकराचार्य की कविता के बारे में तो कुछ सोचे! संस्कृत में इतना वैभव! तो, मेरे मन में एक शे'र गुंज रहा था कि -

यदि नफ़रत करनी है तो भी इरादे मजबूत रखना।
जरा सी चुक होने पर महोब्बत हो ही जायेगी।

शंकर शंकर है! फिर शंकर याद आयेगा, फिर गालीब याद आयेगा, इकबाल याद आयेगा। कैसे नफ़रत करूं?

यूं तो मैं सुक्रात नहीं था,
ज़हर बचा था क्या करता?

- विज्ञानव्रत

किसी के प्रति पूर्वग्रह होने के बाद भी सामने सच्चाई होगी तो महोब्बत के बिना रह नहीं पाओगे। क्योंकि सत्य है। स्पेस में जाओ तो गुरुत्वाकर्षण खत्म। ठीक है? लेकिन सत्य, प्रेम और करुणा का गुरुत्वाकर्षण पूरे ब्रह्मांड में कहीं खत्म नहीं होता है सा'ब!

बाप, अस्तित्व बहाना खोजता है। 'लंकाकांड' में युद्ध, भीषण समरांगण! ये स्वभाव के अनुकूल नहीं है, लेकिन गाता हूं। रस की सृष्टि में वीररस प्रिय है, जब युद्ध होता है। युद्ध था बहाना धर्मरथ देने के लिए। 'उत्तरकांड' बहाना है कागभुशुंडि का वैज्ञानिक दर्शन प्रस्तुत कराने के लिए। पूरी पंक्तियां वैज्ञानिक है। आज का विज्ञान जो कह रहा है वो भुशुंडि में ओलरेडी खबर नहीं किस काल में कहा हो? तुलसी ने संपादित किया।

क्षमा करे, 'उत्तरकांड' में कलियुग का वर्णन जब गोस्वामीजी ने संपादित किया है, कागभुशुंडि ने कहा है, कलियुग का एक लक्षण ये होगा कि आपको जहां जाओ वहां कवि मिलेगा। और ये महसूस करता हूं। मेरे पास आते हैं, बापू, मैंने नई रचना बनाई! मैं कहूं, स्वागत। सब बहाना है। आपको ऐसा नहीं लगता कि यहां मिलना होगा। कथा भी बहाना है। टीनिया के बारे में क्या कहूं? बड़ा दुर्गम काज है, दूसरे मूलक में ये सब आयोजन करना। बड़ा दुर्गम है लेकिन बेटा, 'हनुमानचालीसा' की चौपाई उसका प्रमाण है -

दुर्गम काज जगत के जेते।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते।।

तो, रावण अशगुन की गिनती नहीं करता है, गर्विष्ठ है। यहां भगवान बिनु पदत्राण कदम उठाते हैं, उसी समय इस प्रसंग का जनम होता है। विभीषण सत्य के साथ है, मानी राम के साथ है। उसने देखा कि मेरा ज्येष्ठ बंधु आ रहा है और विभीषण को पता है कि रावण क्या है? रावण की शक्ति, रावण की सूझ, रावण की गर्भित योजना इससे विभीषण परिचित था और आ गया रावण का रथ और ठाकुर नंगे पैर! विभीषण ने देखा। आंख डबडबाने लगी। कंठ कुंठित होने चला। प्रभु ने पूछा, कुछ कहना है विभीषण? मायूस क्यों? तब विभीषण के मुख से ये शब्द निकले -

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि विभीषनु भयउ अधीरा।
अधिक प्रीति मन भा संदेहा।।
बंदि चरन कह सहित सनेहा।।
नाथ न रथ नहिं त न पद त्राना।
जेहि बिधि जितब बीर बलवाना।।

धैर्य गंवाया! भगवान के चरणों में अतिशय प्रेम के कारण संदेह का जन्म होना स्वाभाविक है। चरण में स्नेह से प्रणाम करता है और फिर निवेदन करता है नाथ, रथ नहीं है, पैरों में पदत्राण नहीं है। ये रणधीर रिपु को कैसे जीता जाएगा? प्रभु के चेहरे पे मुस्कुराहट आई और फिर जो 'मानस-धरमरथ' के लिए आधार बनाया वो पंक्ति आई -

सुनहु सखा कह कृपा निधाना।
जेहि जय होई सो स्यंदन आना।

सखा धर्ममय अस रथ जाकें।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।।

'रामचरित मानस' में राम के तीन खास सखा निजी है। सबसे पहला सखा राम को मिला शृंगबेरपुर में गुह। दूसरा सखा सुग्रीव और तीसरा सखा विभीषण। विभीषण का प्रश्न है, रथी रावण को कैसे जीता जाय? यहां न रथ, पदत्राण भी नहीं! 'हे सखा, जिससे विजय श्री प्राप्त होती है वो रथ दूसरा ही होता है। इस स्थूल रथ नहीं। ये कोई दूसरा रथ होता है, जिससे विजय मिलती है।' फिर रथ को रूपक बना करके कहा, हे सखा, ऐसा धर्ममयरथ जिसके पास है उसको जगत में जीतनेवाला कौन मायका लाल हो सकता है जो उसको जीत जाय? धर्म मानी सत्य, धर्म मानी प्रेम, धर्म मानी करुणा। ये दिमाग में रहना चाहिए। क्योंकि जो लोग धर्म के बारे में सही में जानते नहीं, जो लोग धर्म की चर्चा करते हैं ये ईक्कीसवीं सदी का असगुन है! मासुम गाज़ियाबादी कहते हैं -

उसे किसने इज़ाज़त दी गुलों से बात करने की।
सलीका तक नहीं जिसको चमन में पांव रखने का।

लोग कहते हैं, धर्मोपदेश क्यों नहीं पहुंचा व्यक्ति तक? बधांने खबर छे धर्म द्वारा अमारुं क्यांक शोषण थई रह्युं छे! प्लीज़, तथाकथित धर्म, गेरसमज़ मत करना; बाकी घणांनी दुकान चाले छे! तो बाप, धर्मरथ का रूपक बनाकर विशेषणमुक्त सार्वभौम धर्म की चर्चा की है। कुरुक्षेत्र का युद्ध, जहां अर्जुन विषादयोग। यहां विभीषण का विषादयोग है।

'रामचरित मानस' का तीन केन्द्रबिंदु है-प्रारंभ संदेह, मध्य समाधान, अंतिम शरणागति। ये तीन बिंदु को 'रामायण' छूती है। और प्रत्येक साधक किसी भी बुद्धपुरुष के पास जाय उसके पास संदेह होना चाहिए। संदेह जरूरी है। मैं स्मरण करूं रमणबापा पाठक का, अब हमारे बीच नहीं है। उसने एक लेखमाळा शुरू की 'संशयनी साधना।' व्यक्ति की साधना का आरंभ संशय से होता है। लेकिन मध्य में जब साधना पहुंचती है तब तक समाधान हो जाता है और उसके बाद आखिरी पडाव में केवल शरणागति। आखिर में बोल दिया 'करिष्ये वचनं तव।' वो शरणागति। 'राम समान प्रभु नाहीं कहुं।' शरणागति। तो, आरंभ संदेह से होता है, विषादयोग से होता है। तो ठाकुर कहते हैं, धर्मरथ के कौन पहियें?

सौरज धीरज तेहि रथ चाका।

दो पहियें शौर्य और धैर्य। राम साक्षात् धरमरथ है। उनमें दोनों पहियें है। शौर्य और धैर्य। खुद धर्मरथ है। धीरे-धीरे रथ के प्रत्येक अंग का आध्यात्मिक दर्शन तुलसी ने जो कराया है, जो हमारे जीवन के लिए समस्याओं का जवाब दे सकता है। मुझे लगता है, अभी तक 'रामायण' के मंथन से केवल तीन रत्न निकले हैं; ग्यारह बाकी है, और ये खोजते-खोजते शताब्दियां लग जायेगी! और ये तीन 'पायो परम विश्राम' दे सकता है। तो ये पूरा मंथन होगा तब क्या होगा! अद्‌भुत दर्शन है धर्मरथ का!

ग्रंथ का परिचय। वाल्मीकि आदिकवि है, शंकर अनादिकवि है। वाल्मीकि ने 'कांड' शब्द दे दिया। तुलसी ने सोपान कर दिया। सात सोपान की ये सीढ़ी है। जिससे नीचेवाला नर धीरे-धीरे चढ़े तो नारायण बन सकता है। और उपरवाला नारायण जन्म लेकर नीचे आकर हमारे जैसा नर भी बन सकता है। तुलसी का सीढ़ीवाला सोपान मुझे अच्छा लगता है। ये सात ज्ञान की भूमिका है वेदांत में। और शंकर कहते हैं, 'सकल लोक जग पावनी गंगा।' सात लोक नीचे, सात लोक उपर। सातों लोक में रामकथा घूमती है। तो, 'बालकांड', 'अयोध्याकांड', 'अरण्यकांड', 'किष्किन्धाकांड', 'सुन्दरकांड', 'लंकाकांड' और 'उत्तरकांड।' सबसे पहले वाल्मीकिजी ने उसकी रचना की। तुलसी कहते हैं -

रचि महेस निज मानस राखा।
पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।

चौपाई की रचना बहुत सामान्य मानी गई काव्यजगत में, लेकिन ऐसी सामान्य रचना जो ऐसी रचना एक खास वातावरण में जो गाई जाती थी उसको एक संत का हाथ छू गया। तुलसी ने उसको छुआ। वो चौपाई आज कविता की महाराणी बन बैठी है। तुलसी कहते हैं, सबसे पहले शिव ने ये रचना की। नाम रखा 'रामचरित मानस'।

सरोवर के चार घाट होते हैं। तुलसी ने चार घाट निर्मित किए। एक घाट का नाम ज्ञानघाट रखा। वक्ता शिव है, श्रोता पार्वती है। दूसरा घाट उपासना घाट, वो घाट के वक्ता है बाबा कागभुशुंडि, श्रोता है गरुडजी। तीसरा घाट है कर्म का घाट, जहां गंगा-यमुना और सरस्वती अनवरत बहती है। वो कर्म का प्रतीक है। जहां परमविवेकी याज्ञवल्क्य कहते हैं और परम प्रपन्न भरद्वाजजी सुनते हैं ये कर्मघाट है। चौथा घाट तुलसी ने निर्मित किया शरणागति का घाट, आधीनता का घाट, प्रपत्ति का घाट, आश्रय का घाट। जिसके वक्ता तुलसी है, श्रोता खुद का मन है।

तुलसी पूरा इतिहास देते हैं कि ज्ञानकथा शिवकृपा से भुशुंडि को मिली। उपासनाघाट पर गई। वहीं से कथा बही, कर्मघाट पर प्रयाग में आई। वहीं से कथा

मेरे गुरु के पास ये गई। उसके पास से मुझे प्राप्त हुई। गुरु ने मुझे बार-बार कथा सुनाई तब मेरे मन में कुछ ऊतरा और तुरंत मैंने गांठ बांध ली। तुलसी ने क्या गांठ बांध ली? 'भाषाबद्ध करबि मैं सोई।' क्योंकि ये तो संस्कृत में ऊतरी। तुलसी का संकल्प है आखिरी व्यक्ति तक राम को पहुंचाना है तो उसको भाषाबद्ध करूं। समग्र तुलसीदर्शन मन का विरोध नहीं करता। समग्र तुलसीदर्शन मन के निरोध के पक्ष में नहीं है। समग्र तुलसीदर्शन मन को प्रबोध करने के पक्ष में है। 'मोरे मन प्रबोध जेहिं होई।' तुलसी मन से बात करते हैं। सोलहसो ईकत्तीस, मध्याह्न का समय, रामनवमी का दिन। कहते हैं, त्रेतायुग में रामजी प्रकटे तब जो जोग-लगन हुआ था ऐसा ही सोलहसो ईकत्तीस में हुआ। तो, जैसे 'रामनवमी' है, ये 'मानसनवमी' है।

एक भाई मुझे पूछता था, 'बापू, रामनवमी की आपको कितनी खुशी है?' मैंने कहा, राम प्रकट हुए ये तो सवाल ही नहीं, किसको खुशी ना हो? लेकिन आज 'रामचरित मानस' का प्रागट्य है उसकी मुझे विशेष खुशी है। क्योंकि राम को मैंने देखा नहीं, उनके तो मैंने शब्द-शब्द देखे हैं। राम को मैं पकड़ नहीं पाया, इसको ('मानस' को) मैं रोज़ बांधता हूं, खोलता हूं। भगवान हाथवगो होवो जोईये। राम मंदिर में दिखाई दे वो पूरता नहीं है, अपने हाथ में भी दिखना चाहिए। इसलिए 'अपना हाथ जगन्नाथ।' इसलिए वेद का उद्‌घोष होगा, 'अयं में हस्तो भगवान। अयं मे भगवत्तरः।' श्रुति कहती है, मैं विश्व की समग्र बीमारियों का औषध हूं। पहले मंगलाचरण में सात श्लोक है।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

और 'रामायण' का अंतिम प्रकरण, सात प्रश्न गरुड का भुशुंडि को और उसमें समापन। तो सात मंत्रों में मंगलाचरण के बाद लोकबोली में शास्त्र को लाना है, श्लोक को लोक तक लाना है, इसीलिए -

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

पहले पांच सोरठें लिखे। पांचों में पंचदेव की स्मृति की। गणेश, दुर्गा, शिव, सूर्य और विष्णु। सनातन धर्मावलंबी के लिए जो भगवान जगद्‌गुरु शंकराचार्य हमको दे गये। तुलसी ने शांकरी विचार को वैष्णवी विचार के साथ जोड़ा और 'रामचरित मानस' के मंगलाचरण में ही सेतुबंध कर दिया। और आखिर में वो गुरुवंदना करते हैं और फिर तुलसी का 'रामचरित मानस' का पहला प्रकरण गुरुवंदना है। मेरी व्यासपीठ उसको 'मानस-गुरुगीता' मानती है। हमारे जैसे को तो कोई न कोई मार्गदर्शक चाहिए।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरुमहिमा अपार है। गुरु पद का अर्थ है गुरु के मुख से निकला कोई एक पद पकड़ लो; एक चरण पकड़ लो। ब्राह्मणों की वंदना की। साधुसंतों की वंदना की। पूरी जड़-चेतन सृष्टि को तुलसी ने एक पंक्ति में बांध लिया -

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

पूरे जगत की वंदना। उसके बाद पूरे रघुकुल की वंदना की। पारिवारिक वंदना में बीच में तुलसीदासजी ने श्रीहनुमानजी की वंदना की -

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

●

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

●

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
बंदउ राम लखन बैदेही।
ये तुलसी के परम सनेही।

शब्द ब्रह्म भी है और शब्द भ्रम भी है

शब्द ब्रह्म भी है और शब्द भ्रम भी है। अपने आपको ढांकना है तो शब्द का आश्रय लो। आदमी इन शब्दों के माध्यम से अपने को छिपा सकता है। और शब्द ब्रह्म भी है। इसीलिए तो कभी-कभी साधक शब्द के बोज को ऊतारकर नाद की ओर गति करता है। जहां शब्द ना हो, एक नाद हो। और नाद में भी दो प्रकार; एक आहत नाद और दूसरे नाद को जिसको भारतीय मनीषियों ने बहुत प्यारा नाम दिया अनाहत नाद। ताली न बजानी पड़े और बिना ताली नाद उठे। कोई आहत नहीं। और आहत से पैदा हुआ नाद कोई खराब भी नहीं है। सीढ़ी तो यही है।

आईए, कुछ समय बुद्ध होने के लिए युद्ध के मैदान में चलें। रामसेना-रावणसेना दोनों आमने-सामने है। अपनी-अपनी उद्घोषणा कर रही है। भीड़ने की पूरी तैयारी है और दुनिया का बहुत बड़ा बलवान, शक्तिवान, विद्यावान दशानन रथ पर आरूढ है और उसके सामने रावण से कई गुना शक्ति के धारक मेरे ठाकुर रामभद्र इतनी ही सरलता और विनम्रता से बिना पदत्राण कदम भर रहे हैं।

मैंने कई बार चर्चा की है कि परमात्मा ने पंखी को पंख दी, फिर पैर देने की क्या जरूरत थी? क्यों? ये मेरे मन की जिज्ञासा है। पक्षी अपनी पंखों से उड़कर इधर-उधर जा सकता है। और पहले से ही पंख होती है तो वो फिर अभ्यस्त भी हो जाते स्वाभाविक, लेकिन पंख होने के बावजूद पैर दिए गये ये एक बहुत बड़ा संदेश हम सबके लिए है कि पंख मिल जाय तो भी जमीन को छोड़ना मत। कभी-कभी आदमी को पंख मिल जाती है और धरा छूट जाती है! रावण को पंख मिली तो धरा छूटी! और धरा छूटी क्या, धरा की बेटी का अपहरण पर निकला है! और धन्य है राघवेन्द्र। क्यों मंदिर है गांव-गांव राम के? क्यों मेरी व्यासपीठ कहती है, रामचंद्र भगवान प्रिय हो? क्या दुनिया में कोई प्रिय होने के काबिल नहीं? पूर्णता प्राप्त करने के बाद भी पैर ज़मीन पर रहे ओर पदत्राण बीच में न आ जाय ताकि मिट्टी की महोब्बत छूट न जाय। प्रभु ने पदत्राण भी हटाये हैं। दो दृश्य है मानवजीवन को बुद्धत्व प्रदान करने के लिए। एक शे'र है -

तलप दीदार की है यदि तो हरदम ताकते रहना।
लटें हो या लकीर एक दिन तो हट जायेंगे।

नसीब बदल जायेगा। क्या किया था व्रजवासियों ने कृष्ण के सामने? बस, ताकते थे। इस ताकने से कभी नृत्य पैदा हुआ। ताकने से कभी आंखें भीगी हुई। इस ताकने से रोमांचित हुए। प्यार कोई वादा नहीं, प्यार कोई शिकायत नहीं, केवल प्रामाणिकता और पवित्रता की महसूसीमात्र है, अनुभूतिमात्र है। लोग कहते हैं, हमारे साथ उनका प्रेम का रिश्ता है। भूल करते हो, भ्रांति है। गुरुकृपा से मैं इस निष्कर्ष पर हूं, शब्द ब्रह्म भी है और शब्द भ्रम भी है। अपने आपको ढांकना है तो शब्द का आश्रय लो। बहुत सुरक्षित कर पाते हैं हम शब्दों की आड में! आदमी इन शब्दों के माध्यम से अपने को छिपा सकता है। और शब्द ब्रह्म भी है। इसीलिए तो कभी-कभी साधक शब्द के बोज को ऊतारकर नाद की ओर गति करता है। जहां शब्द ना हो, एक नाद हो। और नाद में भी दो प्रकार; एक आहत नाद। जैसे दो मंजीरें घीसे जाय और एक नाद निकले। ये शहनाई को होठों से स्पर्श किया जाय और एक सूर निकले। एक आहत नाद और दूसरे नाद को जिसको भारतीय मनीषियों ने बहुत प्यारा नाम दिया अनाहत नाद। ताली न बजानी पड़े और बिना ताली नाद उठे। कोई आहत नहीं। और आहत से पैदा हुआ नाद कोई खराब भी नहीं है। सीढ़ी तो यही है। इसलिए तो फिल्म की एक पंक्ति में कहा गया। मेरी प्रिय पंक्ति, उसको साधना की ओर जोड़ दो -

जरा आहट-सी होती है तो दिल सोचता है।
कहीं ये वो तो नहीं! कहीं ये वो तो नहीं!

कदम की शाखा जुलती थी तो गोपांगनाओं को लगता था शाखा नहीं झूक रही है, कृष्ण का चरण झूक रहा है। एक पत्ता हिलता था तो लगता था गोविंद पैर हिला रहा है। यद्यपि आहत बुरी चीज़ नहीं है। वहीं से तो जाना होता है। लेकिन उसके पार अनाहत नाद। खबर नहीं, लेकिन उसके बाद शायद एक मुकाम है वो मुकाम का नाम है शून्य; सन्नाटा। नितांत सन्नाटा। तो, शब्द बहुत बड़ा भ्रम भी है, ब्रह्म भी है। मैं प्रार्थना करूं कि परमात्मा की कृपा से पंख लग जाय तो भी पैर मत गंवाना। उसको ही पदवी कहते हैं। मूल्यांकन होना चाहिए। और सही मूल्यांकन हो पैरवालों का। तो मंज़र है, दशानन और दाशरथी राम। आईए, इस युद्ध से बुद्ध की यात्रा का आरंभ करें। अब इस दृश्य में जो पंक्ति आती है तुलसी की, वहीं से धर्मरथ का आरंभ होता है -

रावनु रथी बीरथ रघुबीरा।
देखि बिभीषनु भयउ अधीरा।।

पहला सूत्र है, विभीषण अधीर हो गया। दूसरा सूत्र है, विभीषण के मन में संदेह पैदा हो गया, अधैर्य पैदा हुआ। गुरुकृपा से मेरी समझ ऐसी है कि अधैर्य का जन्म अभाव और प्रभाव के बीच में पैदा होता है। एक ओर प्रभावशाली आदमी और एक ओर कुछ भी नहीं। जब हम समाज में किसीको बहुत संपन्न और किसीको बिलकुल अकिंचन देखते हैं तब असयाना आदमी धैर्य गंवाता है कि ये दुनिया की क्या रीत है? ये दो जो असमानता पैदा होती है समाज के समरांगण में तब कोई भी धैर्यवान का धैर्य टूटने लगता है। और 'मानस' की एक पंक्ति -

धीरज धर्म मित्र अरु नारी।
आपत काल परिखिअहिं चारी।।

चार की कसौटी आपतकाल में, विपत्ति में, मुश्किल में होती है। एक धीरज, दूसरा धरम, तीसरा मित्र, चौथी नारी। विभीषण के अधैर्य का कारण है, दो मंजर। और राम जिस रथ का वर्णन करते हैं इस रथ के एक पहिए का नाम है धैर्य, धीरज। मुझे कहने दो, विभीषण ने रथ में यात्रा कम की है, विमान में ही यात्रा की है। राम के पास गया तो अपना खुद का चार्टर लेके गया! रथ में जाता तो पता लगता कि खुद का पहिया कैसा होना चाहिए? बिना रथ का आदमी है, यद्यपि धार्मिक है। क्योंकि उसके आंगन में तुलसी ने लिखा, तुलसी का क्यारा है, हरि का मंदिर है। कब गरीब के आंसू की आरती उतारी जायेगी? कब इन्सान को पूजा जायेगा? कब जिसके पेट में रोटी नहीं है उसके कंधे पे हाथ देकर महोब्बत की बातें सुनाई जायेगी? जीवित को पूजो। जो प्रत्यक्ष है, जो मौजूद है।

हमने बुद्ध को गंवाया। हमने महावीर को गंवाया। हमने शंकराचार्य को गंवाया। हम बड़े बेईमान लोग है! आहट तो आई थी, लेकिन वो है वो तो गोपियों ने जानी। हम चुक गये! तो अधैर्य पैदा होता है ऐसी घटनाओं से। विभीषण हिंमत नहीं जूटा पाया। धार्मिक है लेकिन धर्मरथ पर नहीं है तो अधीर हो गया।

'बालकांड' में देखिए, महाराज जनक जैसा परमज्ञानी विदेही जब पूरी सभा में से कोई धनुष नहीं तोड़ पाया तब अधीर हो गया! परिस्थिति आदमी को अधैर्य देती है। और धैर्य की कसौटी इस घमासाण कसौटियों के बीच ही तो हो सकती है। हिमालय में तो सब शांत रह सकते हैं! जब विचारों का तांडव चलता रहे, आदमी को दिमाग में उसी समय कौन धैर्य रख पाता है? कभी ये विचार, कभी ये विचार! आदमी कितना विक्षिप्त होता जा रहा है! और लाओत्सु ने कहा, विचार दो धारी तलवार होता है अथवा तो कटार है। कटार में दोनों ओर धार होती है। विचार ठीक चला तो बुद्ध बन जाता है और विचार गलत चला तो युद्ध निर्माण कर सकता है।

तो, जनक धीरज गंवा न देते। इतना बड़ा ज्ञानीपुरुष! परिस्थितियां बड़ों-बड़ों को अधैर्य प्रदान कर सकती है। अब दूसरा शब्द आया भय; तो विभीषण के मन में संदेह पैदा हुआ। पहले अधैर्य पैदा हुआ। डामाडौल चित्त में संदेह उठना शायद स्वाभाविक है। जिसका चित्ततंत्र डामाडौल है, वहां संदेह उठेगा। लेकिन यहां संदेह का कारण प्यारा दिखाया।

अधिक प्रीति मन भा संदेहा।
बंदि चरन कह सहित सनेहा।।

बड़ा मनोवैज्ञानिक सूत्र है, अधिक स्नेह के कारण संदेह पैदा हुआ। राम के प्रति अधिक प्रीति विभीषण के संदेह की जन्मदात्री बनी। और हमारे यहां माना गया है कि अत्यंत स्नेह शंकाशील होता है। और शांति से सोचिए। मेरी समझ में ऐसा ऊतरा है कि अधिक प्रीति तीन जगह होती है। एक माँ और संतान अधिक प्रीति के केन्द्र है। दूसरे मित्र और मित्र; तीसरा भक्त और भगवान। मित्र-मित्र में अधिक प्रीति होती है। 'मैत्री' पतंजलि का बड़ा प्यारा शब्द है। तो, मित्र-मित्र में अधिक प्रीति होती है। अधिक प्रीति ना हो तो समझना ये खोखला दिखावा है! दूसरा केन्द्र है, माँ और संतान। बेटी हो, बेटा हो। संतान के प्रति माँ का कोई स्वार्थ नहीं, केवल अधिक प्रीति। इसलिए बच्चा बालमंदिर जाता है, आठ घंटे के बाद रीक्षा आई नहीं, लौटता नहीं तो माँ को तो ये होना चाहिए, शायद बालमंदिर में किसी बालक की जन्मदिन की पार्टी होगी, आईसक्रीम खिलाते होंगे; ऐसा नहीं सोचेंगे। रीक्षावाला देर से पहुंचा होगा? रीक्षा गिर गई होगी? अधिक प्रीति संदेह की जन्मस्थान है। कोई माँ बच्चे का बुरा नहीं मानती, लेकिन अधिक प्रीति संदेह पैदा करती है। और तीसरा, भक्त और भगवान, कुछ समय तक एक लेवल तक। मीरां ने ऐसा क्यों गाया? भक्ति का ये शायद अधिकार है अधिक प्रीति का।

जो मैं ऐसा जानती प्रीत किये दु:ख होई।
नगर ढिंढोरा पिटती प्रीत न करीयो कोई।

क्या मीरां प्रीतिविरोधी है? कृष्णविरोधी है? न को। लेकिन अधिक प्रीति ये करवाती है। नीतिकारों ने तो कहा है, संदेह के ओर दो केन्द्र भी है। बदलती नीति आदमी के मन में संदेह पैदा करती है। इसके साथ ये नीति उसके साथ ये नीति! और दूसरा है, आदमी की रीतभात भी संदेह पैदा करती है। हमको नहीं बुलाया, उसे बुलाया, ऐसा। ये सभी बातें संदेह को निर्मित करती है। हमारे यहां भगवान को गालियां तक दी है अधिक प्रीतिवश! अधिक प्रीति में ऐसा होता है। मैं बार-बार बोलता हूं कि धर्म ने आदमी की मुस्कुराहट छिन ली! यहां मुस्कुराना क्या, नाचने की छूट है। क्षत्रियों के घर में सूर्य को प्रवेश करने की मना है, वर्ना सूर्यकुल है। सूर्य प्रवेश नहीं करता, साधु प्रवेश करता है। साधु मीन्स भजन, मीरां ने तोड़े दरवाजें।

हवे तारो मेवाड मीरां छोडशे.
मीरां विनानुं सुख घेरी वळशे ने राज,
रूंवेरूंवेथी तने तोडशे.
गढने होंकारो तो कांगराय देशे,
पण गढमां होंकारो कोण देशे?

'पग घूंघरुं बांध मीरां नाची रे।' मेरे देश में चैतन्य नाचा। मेरे देश में कृष्ण नाचा। व्रजांगना यें नाची। मेरे देश में भक्तिसूत्र का प्रदाता नादनर्तन करता है। सबसे उपर जिसका मुकाम है, वो महादेव नाचता है। मेरा राम नाचा है। नाचा भी है और उसने नचाया भी है।

नाचहि निज प्रतिबिंब निहारी।

किसी ने कहा, आपके राम नाचते नहीं! किसी ने कहा और मान लिया? जिसका संदेह उधार उसके विश्वास की आरती कौन करेगा? हमारा संदेह भी मौलिक नहीं! जिन्होंने 'रामचरित मानस' के पृष्ठ नहीं देखे वो कहते हैं कि राम नाचे नहीं! एक साधक ने ये भी पूछा था, तुम्हारा राम कभी होली खेले? अरे तुलसी साहित्य तो देखो, प्लीज़। दशरथ के आंगन में मणि में अपनी प्रतिछाया देखकर राम नृत्य करते हैं।

तो अधिक प्रीति के कारण कभी-कभी भक्त भगवान के प्रति संदेह पैदा कर लेता है, गाली भी देता है। ये सबकुछ होता है। और यहां भगवान राम और विभीषण सखा भी है; भक्त और भगवान भी है। पूरे प्रसंग में भगवान राम विभीषण को तीन बार 'सखा' कहकर उद्‌बोधन करता है। त्रिसत्य कर देते हैं।

सुनहु सखा कह कृपानिधाना।
जेहि जय होहि सो स्यंदन आना।

अधिक प्रीति संदेह का कारण बनती है। और कभी-कभी हमारा संदेह मौलिक नहीं होता, उधार होता है। यद्यपि संदेह गुलाम है, लेकिन बन जाता है मालिक! मेरे श्रावक भाई-बहन, संदेह जायेगा ये बुद्धपुरुष के समीप। सत्संग, सद्‌वार्ता, सद्‌संवाद, अच्छी किताब पढ़ो। अच्छी कविता पढ़ो, अच्छी शायरी पढ़ो, ये सब सत्संग है। अच्छे मंज़र देखो।

गरुड के मन में भी बहुत बड़ा संदेह प्रगट हुआ 'मानस' में। गया गरुड कागभुशुंडि के पास और बैठ गया चुपचाप और भुशुंडि से कहने लगा, मुझे बहुत बड़ा संशय है, मेरे संशय से मुझे मुक्त करो। नौकर को बरखास्त करना चाहता हूं, लेकिन मालिक बन बैठा है! कभी-कभी संशय को हम इतना बल दे देते हैं। युवान भाई-बहनों को कहूं, जहां तक संभव हो संदेह पैदा न हो। जरूरी है संशय की साधना, लेकिन वो परीक्षा के लिए ना हो, कुछ पाने के लिए। अथातो ब्रह्मजिज्ञासा। अथातो धर्मजिज्ञासा। अथातो भक्तिजिज्ञासा। और 'मानस' में प्रसंग है, गरुड जाता है कागभुशुंडि के आश्रम में। और कुछ वातावरण ऐसे होते हैं कि वहां जाते ही संशय दूर होने लगते हैं।

देखी परम पावन तव आश्रम।
गयउ मोह संसय नाना भ्रम।

और 'उत्तरकांड' में आप पढ़ते हैं भुशुंडि का प्रकरण, उसमें आखिर में लिखा है, प्रतिभाव है। सुनने के बाद तुलसी लिखते हैं -

गयेउ मोर संदेह सुनेउँ सफल रघुपतिचरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक।।

हमारे संदेह भी उधार है! किसी ने कुछ बोल दिया, हम मान बैठे और आध्यात्मिक यात्रा रुक जाती है। लेकिन यहां -

अधिक प्रीति मन भा संदेहा।
बंदि चरन कह सहित सनेहा।

अत्यंत प्रीति के कारण संदेह हुआ है। और संदेह व्यक्त करने की छूट है शुरू में लेकिन एक पद्धति भी लिखी है यहां, किसी के सामने संदेह करना है तो आदरपूर्वक करो। पाने के लिए, नापने के लिए नहीं। और दूसरा, प्रणाम करके। हमारी परंपरा है कि मनमें है कोई प्रश्न तो पूछो, उपनिषद्‌कारों ने भी कहा। 'मानस' में आप देखिए, सभी ने संदेह किया है। लेकिन इस ढंग से किया है कि इस संदेह से राम प्रकट हुए। रामकथा प्रकट हुई। तो, विभीषण पहले प्रभु को प्रणाम करता है और आदर के साथ, स्नेह के साथ अपना संदेह व्यक्त करने लगा। फिर -

नाथ न रथ नहि तन पद त्राना।
केहि बिधि जितब बीर बलवाना।।

कैसे जीत पायेंगे रथी रावण के सामने बिरथ राम? इस बलवान वीर को कैसे जीता जायेगा? मेरे मन में संदेह है, आप समाधान करे। और ठाकुर वहीं से धर्मरथ का आरंभ करते हैं।

सुनहु सखा कह कृपानिधाना।

मुझे तो लगता है, कोई संदेह करे तब जिसका चित्ततंत्र बराबर हो उसको कृपा करनी चाहिए। चार वस्तु जिसमें होती है उनको सपने में भी शांति नहीं मिलती। मुझे भगतबापू की पंक्ति याद आती है। बहुत प्यारी पंक्ति -

झडपेला अमृतथी सुरनां, चित्त कदी नहि स्वस्थ थशे,
झांटेलुं अमी अमर करे पण, अभय नहीं आपी शकशे.

किसी का छिना हुआ अमृत आपको अमरता देगा, लेकिन अभयता नहीं देगा। और जिससे अभय ना मिले वो अमृत कौन काम का? और अभय सत्य के बिना आता नहीं। आदमी में सत्य की मात्र जितनी ज्यादा इतना आदमी अभय। शगुन-अशगुन नहीं होता।

मुंबई के एक बेरिस्टर, अब तो नहीं रहे। हम बैठे थे मुंबई में तो उसको एक मिटिंग थी आवश्यक तो वो खड़े हुए। मैंने कहा, फिर मिलेंगे। इतने में मेरे पास विनुभाई बैठे थे। विनुभाई को छींक आई। तो, इतना बड़ा बेरिस्टर बैठ गया! मैंने कहा, साहब, आपको तो जाना था? बोले, अब पांच मिनिट नहीं जा सकते, छींक आई! शगुन-अशगुन पढ़े-लिखे को भी मार देते हैं! इनमें से बाहर निकलो। चित्ततंत्र पवित्र होगा तो दिशाएं शुभ हो जाएगी। बाकी संकेत होता है। मेरे 'मानस' में तो लिखा है -

ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुँ मन बिश्राम।
भूत द्रोह रत मोहबस राम बिमुख रति काम।।

गोस्वामीजी कहते हैं, उसको आंतर्-बाह्य समृद्धि कभी नहीं मिलती। शायद बहिर् मिल जाय, आंतरिक नहीं मिलती और उसको कभी अच्छे संकेत नहीं प्राप्त होते, अच्छे शगुन नहीं होते और चित्त की प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती सपने में भी; जिसमें चार वस्तु है। जो भूतद्रोहरत, जो भूतद्रोह करता है, प्राणीमात्र का द्रोह करता है। कभी-कभी किसी कारणवश आप किसीसे विद्रोह करो तो क्षम्य है। लेकिन अकारण द्रोह करते जाओ, अच्छा नहीं। जहां तक विवेक ठीक हो भूतद्रोह मत करना, प्लीज़। दूसरा, अत्यंत मोह के आधीन होना। हम जीव है, आकर्षण होगा, मोह होगा, अंधेरे से प्रीति होगी, कुछ समय उजाला समझ नहीं आयेगा। और 'गीता' का तो आखिरी मंत्र यही है, 'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा।' मेरा मोह गया। अपने में दंभ हो तो झूठा मोह मत करना। 'सुन्दरकांड' का पाठ हम करते हैं। वो कहते है, राघव, मैं अत्यंत मतिमंद हूं और मैं मोहवश हूं।

रावण में ये चारों लक्षण है। रावण अत्यंत मोह में बंधा हुआ आदमी है। तुलसी कहते हैं, स्वयं मोह है रावण। रावण स्वयं मूर्तिमंत मोह है। उसका भाई मूर्तिमंत अहंकार है। ये तुलसी का अध्यात्मदर्शन है। 'रामचरित मानस' का मर्म जानने के लिए 'विनयपत्रिका' का अध्ययन बहुत जरूरी है। 'विनयपत्रिका' आपको बहुत बल देगी 'मानस' के रहस्यों को खोलने के लिए। वहां अहंकार ही मोह का भाई है। कुंभकर्ण बहुत खाता था। अहंकारी व्यक्ति की कितनी ही तारीफ़ करो, पेट भरता ही नहीं! और अहंकारी सोता रहता है, निष्क्रिय रहता है। मोहनिशा, एक प्रमाद। और व्यास ने प्रमाद को मृत्यु का पर्याय बताया। आलसी आदमी मरा हुआ है।

तुलसी का आध्यात्मिक विनयदर्शन कहता है, मोह का बेटा है मेघनाद इन्द्रजित और उनका नाम है काम। क्या सटीक अध्यात्मदर्शन है तुलसी का! लक्ष्मण राम की यात्रा में साथ है और वो चौदह साल जागरुक रहे हैं, वो सोये नहीं। लक्ष्मण निद्राजित है, सोता नहीं है। इन्द्रजित का बाण आया और लक्ष्मणजी को मूर्छित कर गया! हमें कितना बड़ा बोध मिलता है कि समर्थ जागरुक पुरुष को भी कामना कभी न कभी मूर्छित कर

सकती है। यद्यपि मेरे लक्ष्मण को मूर्छित करनेवाला इस धरा में कोई पैदा नहीं हुआ। लेकिन हम जैसों को प्रेरणा देने के लिए। काम बड़ों-बड़ों को मूर्छित कर सकता है। तो, अत्यंत मोहवश को न संपदा मिलती है, न शगुन मिलते हैं, न चित्त की प्रसन्नता मिलती है। अत्यंत रामविमुख, सत्यविमुख, प्रेमविमुख, करुणाविमुख ऐसी व्यक्ति को न संपदा मिलती है न चित्त की शांति मिलती है। रतिकाम, अत्यंत भोगी, कामुक उसको न शांति मिलती है, न शगुन मिलता है, न चित्त की शांति।

संदेह करनेवाला पर कृपा करे, करुणा करे। सत्य रहता है जीभ में, प्रेम रहता है हृदय में और करुणा रहती है आंखों में। ये तीनों का घराना है। बाप, किसीने संदेह किया तो जवाब कृपा करके दियो। वो भी संदेह करे और आप संघर्ष करे तो सब प्लस होता जाएगा। कितने स्वस्थ होगे? राम कृपानिधान बोले, विभीषण, जिससे विजय प्राप्त होती है, बाप, वो कोई दूसरा ही रथ होता है। वो आंतरिक रथ है। यहां से रथ का वर्णन शुरू होता है। पहला वर्णन पहियें से आरंभ किया।

सौरज धीरज जेहि रथ चाका।
सत्य सील दृढ ध्वजा पताका।।

जीवनरथ-धर्मरथ जो कहो विभीषण, धर्मरथ के दो पहियें होते हैं, शौर्य और धैर्य। धर्मरथ एक पहिये से नहीं चल सकता। जीवन में कई लोगों में धार्मिकता है, लेकिन शौर्य नहीं! कई शौर्य है, पर धैर्य नहीं! लेकिन कभी-कभी धार्मिक व्यक्ति का भी धैर्य टूट जाता है। धैर्य का पहिया टूटा और धर्मरथ खंडित हुआ। कई लोगों में मेरु जैसी धीर होती है, लेकिन शौर्य नहीं! छोटी-छोटी बातों में घबरा जाता है। धर्मरथ के दोनों पहियें समान हो। लेकिन दो पंक्ति के बीच जो जगह होती है वहीं से सार्थक अर्थ निकलते हैं। दादाजी कहते थे, पहियें बराबर हो, लेकिन धरी बराबर ना हो तो? तुलसी ने धरी की बात नहीं की है। और बाप, पहियें घूमते रहने चाहिए, धरी घूमनी नहीं चाहिए। धरी घूमी तो गति नहीं होगी। धरी स्थिर होनी चाहिए। उस धरी का नाम दादा ने बताया था निष्ठा। निष्ठा घूमनी नहीं चाहिए। भरोसो कहो, गुणातीत श्रद्धा कहो। कभी-कभी हमारी निष्ठा घूम जाती है कि इतना हमने सहा! पुष्टिमारग का बहुत बड़ा आश्रय का पद है।

दृढ इन चरनन केरो भरोसो, दृढ इन चरनन केरो,
श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिन, सब जग मांहे अंधेरो ...

दृढ संकल्प। मेरी बात यही है कि भरोसा ही भजन है।

हरिने भजतां हजी कोईनी लाज जतां नथी जाणी रे।
जेनी सुरता शामळीयाने साथ वदे वेद वाणी रे।

मैं विश्वास के साथ बोलता हूं, जिसको कोई बुद्धपुरुष मिल जाय उसके माँ-बाप मरते नहीं। क्योंकि 'तू जहां-जहां जायेगा मेरा साया साथ होगा।' हमारे पीछे कोई परमतत्त्व है, जो हमारा रक्षण करता है।

तो बाप, निष्ठा की धरी हमारी घूमती रहती है। और धरी टूटे तो गाड़े की क्या दशा होती है? ऐसी ही दशा साधक की हो जाती है, जब निष्ठा टूटे। मैं वोशिंग्टन में कथा में कह रहा था। हमारे डो. नीरज भूषण, जिस घर में ठहरा था। कथा को बहुत फोलो करते हैं। कभी मैंने कथा में कह दिया होगा कि आदमी जब बड़ा बंगला बनाये तो एक शून्य रूम बनाना चाहिए, झीरो रूम, बिलकुल एम्प्टी। मौका मिले उसमें पांच-दस मिनिट बैठना चाहिए, जिसमें कुछ ना हो। तो उस डोक्टर ने बनाया। मुझसे कहने लगे, बापू, उस रूम में कुछ नहीं है; कुछ किताबें, टी.वी. और ये व्यासपीठ का फोटो। अब मैं आगे कैसे चलूं? मैंने कहा, आपको ठीक लगे ना लगे, लेकिन ये शून्य रूम तभी होगा कि मेरी तसवीर भी हटा दो। तसवीर भी बाधा बन सकती है। हटाओ, क्योंकि व्यासपीठ भी तुम्हारी बाधा न बने। ठाकुर रामकृष्ण से मैंने ये सीखा है। हम को 'मानस' ने ये सिखाया। लेकिन -

कभी तूफ़ां कभी कश्ति कभी मज़धार से यारी।
किसी दिन लेके डूबेगी तेरी ये सभी होशियारी।
- मासुम गाज़ियाबादी

हमारी बदलती निष्ठा की होशियारी ने हमें मार दिया है! तो, शौर्य और धैर्य रथ के दो पहियें है। निष्ठा धरी है।

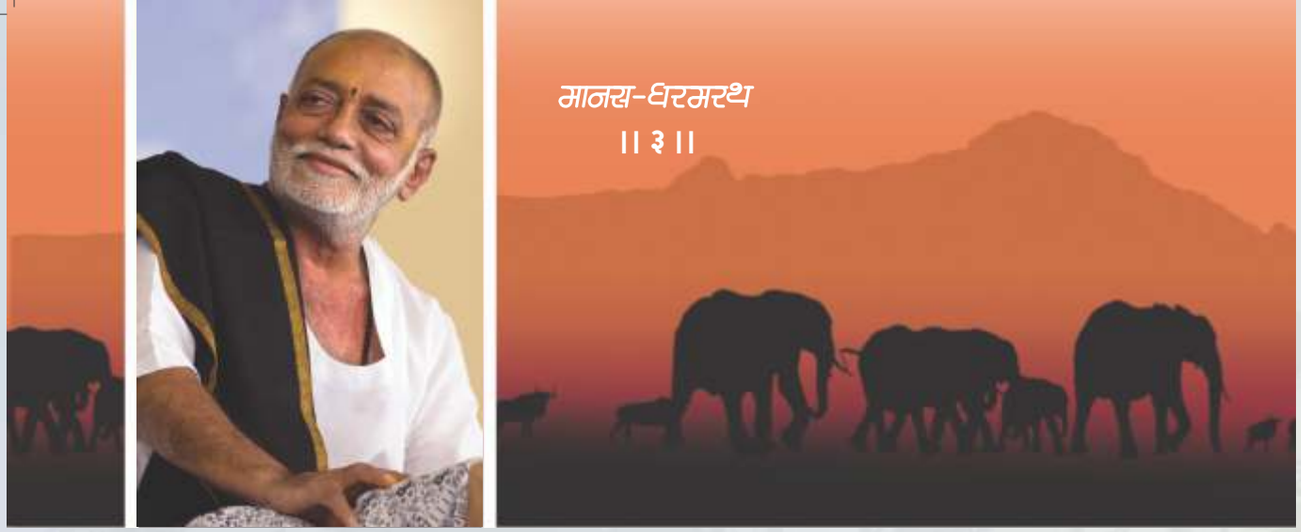

भगवद्कथा विचारों को दीक्षित करने का प्रयोग है

क्या हम इतनी कथा सुनने के बाद एक-दूसरे से द्वेष नहीं छोड़ सकते? हर क्षेत्र में समधर्मी को आपस में द्वेष! सोचो। संघर्ष सदैव उष्णता पैदा करता है, उष्मा पैदा नहीं करता। द्वेष छूटे। खुले मैदान में परमात्मा ने ओक्सिजन दिया है, स्पर्धा क्यों करते हो? तुम्हारे फेफड़ें जितनी ले सके, ले लो प्राणवायु, लेकिन एक-दूसरे से लड़ रहे है! द्वेष-द्वेष, हर एक क्षेत्र में! एक ओर सभी विद्यायें बड़ी रीच होती मुझे दिखाई देती है और दूसरी ओर हर जगह संघर्ष! ये मेरे से आगे न बढ़े! क्यों किसीका द्वेष करे? क्यों स्पर्धा में ऊतरे?

बाप, युद्ध के मैदान में चलें बुद्धत्व की प्राप्ति के लिए। कुरुक्षेत्र और लंका के रणमैदान में बहुत साम्य भी है और वैषम्य भी है। 'रामायण' के युद्धकांड में रावण का रथ सामने है। यहां भगवान राम खड़े हैं। 'महाभारत' के रणमैदान में अर्जुन का आदेश था कि मेरे रथ को मध्य में स्थापित किया जाय जहां से दोनों सेनाओं का डिस्टन्स सम हो। वहां भी विषाद, यहां भी विषाद। फ़र्क इतना कि अर्जुन का विषाद मोहवश है और विभीषण का विषाद अधिक प्रीति के कारण है। संदेह का जन्म किस भूमिका से पैदा होता है, इसीसे ज्यादा डिपेन्ड करता है। अर्जुन की पूरी प्रश्नावलि मोहजन्य है शुरू में, बाद में जिज्ञासाजन्य भी है।

आज जिज्ञासा है, 'बापू, भगवान राम विभीषण को आरंभ से 'सुनहु' क्यों कहते हैं?' आदमी को कहना पड़ता है, सुनो! पूरी कायनात सुनती है, लेकिन कानवाले नहीं सुनते! इसीलिए कहना पड़ता है, सुनो। हम बहरे हैं! घोड़े को नहीं कहना पड़ता कि सुनिये। एक आदमी ही है कि बेटा बाप का नहीं सुनता! बेटी माँ की नहीं सुनती! चेला गुरु की नहीं सुनता! नौकर मालिक की नहीं सुनता! 'सुनहु' शब्द का प्रयोग इसीलिए है कि जिसको कुछ कहना है वो श्रोता को निमंत्रित करता है। 'सुनहु' एक आदर वाचक शब्द है। आदमी को कहना पड़ता है, उठो; घोड़े को कभी कहना पड़ता है, उठो? घोड़ा बैठता ही नहीं। जहां तक मेरा ग्राम्यदर्शन है, मैंने घोड़े को बैठता नहीं देखा। आदमी बैठ जाता तो उठता नहीं!

तो, 'सुनहु' शब्द भगवान कहते हैं तो यहां विभीषण को निमंत्रित किया है। और 'सुनहु' इसलिए कहा कि 'सुनहु' नवधा भक्ति में पहली भक्ति है -

श्रवणं, कीर्तनं, विष्णो: स्मरणं, पादसेवनम्।
अर्चनं, वन्दनं, दास्यं, सख्यं, आत्मनिवेदनम्।।

वेदांत में आध्यात्मिक यात्रा का आरंभ श्रवण से ही बताया है। हमारे वैष्णव परंपरा के अमरदासबापू ने एक भजन लिखा था -

श्रवण मनन निदिध्यासन करतां
सहेजे मुक्ति थाय हरि, जीव तुं भजी लेने रघुराय।
तारो फेरो सफळ थई जाय, भजीले ने ...

मेरी व्यासपीठ की मोक्ष की व्याख्या क्या है? धर्म से मुक्ति, अर्थ से मुक्ति, काम से मुक्ति, मोक्ष। मृत्यु ही मुक्ति है। मर जाय मुक्ति; न जंजट, न राग, न द्वेष। क्यों सबको लोग पूजते हैं? नहलाते हैं? चंदन करते हैं? क्योंकि अब कोई पाप करनेवाला नहीं है। याद रखना, जिस्म पाप नहीं करता, सोच पाप करती है। इसलिए गंगा जिस्म को साफ करती है, सोच को नहीं। मुझे कहने दो, मेरी ये 'मानस' गंगा सोच को भी साफ करती है। भगवद्कथा क्या है? विचार बदलने का प्रयोग। विचारों को दीक्षित करने का प्रयोग। निम्न विचारों को उर्ध्वित करने का सात्त्विक प्रयोग। तो, आज़ाद को आज़ाद करना वही मजहब है। और वैसे मजहब आज़ाद नहीं होता। कुछ चीजें सच लगती है, पर सच नहीं होती।

तो बाप, धर्म, अर्थ, काम तीनों से जब आदमी मुक्त हो जाय, मेरी व्यासपीठ उसके बाद जो परिणाम आता है उसको मोक्ष मानती है। और मैं मोक्षवादी हूं नहीं। हमें तो बार-बार धरती पर आना है। वैकुंठ जाने की जिद्द मत करो, वैकुंठी जीवन जीओ। जय तुम्हारी नौकरी करेगा। इसलिए मैं कहता हूं, रामचंद्र भगवान प्रिय हो। जय-विजय तो उसके चाकर है। वैकुंठी जीवन के अगल-बगल में जय-विजय चौकीदार की तरह चलते है। किसी संत से मैंने सुना था, धर्म के मोह का, अर्थ के मोह का, काम के मोह का क्षय हो जाय, उसी का नाम मोक्ष।

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर।
जय कपीस तिहुँ लोक उजागर।।
रामदूत अतुलित बलधामा।
अंजनि पुत्र पवन सुत नामा।।

सबकी अपनी-अपनी मजहब की व्याख्या होती है। इसलिए मैं कहता हूं, परम स्वातंत्र्य, प्रेमपूर्ण स्वातंत्र्य का नाम धर्म है। प्रेमपूर्ण सत्य का नाम धर्म है। प्रेमपूर्ण करुणा का नाम धर्म है। तो, आदमी को उठने को कहना पड़ता है, घोड़े को नहीं।

सुनहु सखा कह कृपानिधाना।
जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।

अर्जुन को अपने साथ लड़नेवाले पहले सब प्रिय लगे, उसके बाद दुश्मन दिखे। और विभीषण को भी रावण पहले अपना लगा। इसलिए तो कितनी सलाह देता है, बहुत अपनापन दिखता है। लेकिन युद्ध के मैदान में उसको लगा, ये आदमी कितना बलवंत है! विभीषण ने राम की मानसिकता ठंडी करने का असफल प्रयोग किया।

युद्ध के मेदान में नियम है कि जिसके पक्ष में आप हो, जो लड़नेवाला हो, उसके बल की क्षीणता न हो; होंसला बढ़ाना चाहिए। यहां विभीषण ने क्या किया? रावण रथी है, मनोबल गिरा रहा है। कारण अधिक प्रीति। सारथि को भी चाहिये कि रथी का उत्साह बढ़ाये। तो भगवान से कहने लगा, रावण रथ में है और आप बिरथ है। आपके शरीर पर बखतर नहीं है और पग में भी त्राण नहीं। ऐसे बलवान रिपु को आप कैसे जीत पाओगे? अपने भाई को बलवान बताया। दूसरा होता तो नाराज़ हो जाता कि मैं निर्बल हूं? मैंने तुझे शरण रखा है। तू आज कहता है, रावण बलवान है! लेकिन प्रभु कहते हैं, रथ के चार घोड़े होते हैं -

बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।

धर्मरथ के चार घोड़ें हैं - बल, विवेक, दम और परहित। विभीषण, तेरा भाई बलवान है, लेकिन उनके रथ में एक ही घोड़ा है। केवल बलवाला घोड़ा है, बाकी मर चूके हैं!

इसलिए तू जिसको बलवान कहता है ये बिलकुल निर्बल दिखता है।

तो, 'सुनहु' बड़ा आदर है। पहले भिक्षुक को दाता के पास जाना नहीं पड़ता था, बुलाते थे कि आओ। दाता तो वो है जो याचक का याचकपन मिटा दे। भगवान तो कृपानिधान है, लूटना है तो लूट लो। कृपा ले जाओ, ले जाओ। मेरे रघुवीर के पास कृपा का खजाना है। इसलिए वो विभीषण को निमंत्रित करते हैं, विभीषण, हे सखा, जिससे विजय मिलती है वो रथ कोई दूसरा होता है। विभीषण ने वो 'आना' शब्द पकड़ लिया। राघव, ठाकुर, विजय देनेवाला रथ कोई दूसरा होता है, मतलब क्या? रथ तो धातु के होते हैं, लकड़ी के होते हैं, लोहे के होते हैं। आप कहते हैं, कोई ओर रथ है वो कैसे? भगवान ने कहा, तूने कितने रथ देखे हैं? बोले, मेरे भाई रावण के रथ मैंने देखे हैं, स्वर्णीय रथ। मेरा भतीजा इन्द्रजित का रथ ताम्रवरणा है। कुंभकर्ण यद्यपि रथ में नहीं बैठता; वो पैदल चलता है। अकेला आता है साहब! बोले, कुंभकर्ण का क्या हुआ? वीरगति। तो कुंभकर्ण को किसने मारा? आपने। इन्द्रजित को किसने मारा? लखन ने। तब हमारे पास रथ था? उस समय भी मैं नंगे पैर गया था। तब तुझे रथ की याद नहीं आई? इसलिए बाप, जिससे विजय मिलती है वो रथ कोई दूसरा होता है। रावण जिस रथ में है उसमें रथी को बैठना पड़ता है और मेरे पास जो रथ है उसको अंत:करण में बिठाना पड़ता है। धर्म में हमें बैठना नहीं, धर्म को हममें अंदर बैठना है। एक ऐसा रथ है जो अंत:करण में बिठाया जाता है।

धर्म तो मासूम है, लेकिन तथाकथित लोग ऐसा धरम को पकड़कर लड़ने पर मजबूर करते हैं! रावण ने तो देवताओं से कई रथ लिये। विमान मिला तो विमान ले लिया पुष्पक। कुबेर के पास गया, यद्यपि उनका भाई लगता है। कुबेर के पास गया कि विमान पुष्पक की तुझे क्या जरूरत है?

सूफ़ियों ने तो गाया। निझामुद्दीन की दरगाह के पास अमीर खुशरो ने तो ये गाया। बुद्धपुरुष क्या करता है? मुर्शिद क्या करता है?

छाप तिलक सब छिनी रे,
मोहे नैना मिलायके।

बुद्धपुरुष का काम यही है, सब छिन लेता है।

इन्हीं लोगों ने ले लिया दुपट्टा मेरा।

दुपट्टा का मतलब द्वैत। बुद्धपुरुषों ने द्वैत को छिना, अद्वैत निर्माण कर दिये। ये हिन्दु, ये मुस्लिम, ये बौद्ध, ये ईसाई। धर्म को चाहिए अपनी भुजायें विशाल रखे।

हमरी न मानो सिपईयां से पूछो।

●

राम दुआरे तुम रखवारे।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे।।

ये (हनुमानजी) मेरा सिपाई है। क्यों?

साधु संत के तुम रखवारे।
असुर निकंदन राम दुलारे।।

जानते-बुझते जिस सख्श ने धोखा खाया है, क्योंकि उसके अंदर कोई विद्या छिपी है। कोई फन छिपा है। कोई सत्त्व-तत्त्व छिपा है, इसलिए वो छलने आया, छल जा बच्चा!

वैसे तो ठीक रहूंगा, मैं उससे बिछड़के फ़राज़,
बस दिल की सोचता हूं कि धड़कना छोड़ ना दे।

ऐसे शेरों को मैं उर्दू का अद्वैत कहता हूं।

तुम मेरे पास होते हो, कोई दूसरा नहीं होता।

ये अद्वैत नहीं तो क्या? ये वेदांत नहीं तो क्या? मुझे बहुत प्रिय पंक्ति। यहां कोई दूसरा है ही नहीं। नरसिंह ने कहा, 'ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।' अद्वैत। सद्गुरु क्या करता है? द्वैत छिन लेता है। एकांत और एकाग्रता में अंतर है। बहुत अंतर है, आध्यात्मिक अंतर है। एकाग्रता उसको कहते हैं कि जिसमें अभी एक की अग्रता है। अभी कोई बचा है। एक मौजूद है, एक अग्र है। और कोई नहीं है चलो, लेकिन एक तो है उसको एकाग्र कहते हैं;

उसको एक की अग्रता, एकाग्रता कहते हैं। और उसको कहते हैं एकांत, जहां एक का भी अंत हो गया। जहां एक भी गया! जहां कोई है ही नहीं। 'चिदानंदरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्।' तो, बुद्धपुरुष क्या करता है? दुपट्टा छिन लेता है। साधक का द्वैत छिन लेता है।

अबु हसन करके बहुत बड़ा फ़कीर हुआ। उसके पास एक आदमी जाता है और आदाब करके बहुत इज्जत देकर जिज्ञासा करता है कि मुझे दीक्षित होना है, मुझे संन्यासी होना है, मुझे फ़कीर होना है, जो कहो। मेरी इच्छा है, मैं पवित्र हो जाउं, पाक हो जाऊं। इसलिए पौशाक जो है आपने जो पहना है वो मुझे दे दो। आपकी कोई चीज़ मुझे दे दो। मेरे अंग पर रहेगी तो मैं पाक हो जाउंगा, मैं दीक्षित हो जाउंगा। कुछ देर तक हसन शांत रहे। पूछा कि मैं आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। अबु हसन ने कहा, क्या स्त्री का कपड़ा तू पहन ले तो तू स्त्री हो जायेगा? न को। इस औरत का कपड़ा पहनने से तू पुरुष मिट जायेगा? बोले, नहीं। औरत यदि पुरुष का कपड़ा पहन ले तो वो पुरुष हो जाएगी? नहीं। यदि साधक, स्त्री के कपड़ें पहनने से तू स्त्री नहीं बन जाएगा। वैसे मेरे कपड़ें पहनने से तू संन्यासी नहीं हो पायेगा। तेरी सोच बदल बेटे, मैं तो सब छिननेवाला आदमी हूं।

'भगवद्गीता' अप्रतिम है, बेजोड़ है। जिसकी तुलना नहीं हो सकती। उसने हम सब संसारियों को संन्यासी होने की एक छोटी-सी फोर्म्यूला दी। संन्यासी भगवा कपड़ा पहने, फकीर पहने, उसकी इज्जत करनी चाहिए, अवश्य। लेकिन इतनी मात्रा से तो काम नहीं चलता और हम संन्यासी तो नहीं हो पायेंगे। 'भगवद्गीता' से हमने पाया, ज्ञेय, अर्जुन, तू उसको नित्य संन्यासी समझ जो किसी का द्वेष न करे, न किसी से अपेक्षा करे। दो ही लक्षण जो किसी का द्वेष न करे और किसी से कोई भी प्रकार की चाह न करे। कृष्ण कहता है वो कायमी संन्यासी है। अबु हसन कहते हैं, मेरे कपड़ें पहनने से तू कबीर नहीं हो पायेगा। तेरी भीतरी सोच बदल। सही बुद्धपुरुष कंठी पहनाता नहीं, कंठ पकड़ता है। हम यदि में जीते हैं! यदि ऐसा होता, यदि नहीं! शायद में जीओ ये सब सूफीयानी बातें है। शायद मैंने एक कथा सुन ली होती तो! शायद मैंने हरिनाम ले लिया होता तो!

मेरे भाई-बहन, यदि ने जिंदगी बरबाद कर दी! दीक्षित हो जाये। प्रयोग करे। मैं आपके संग-संग हूं। चलता हूं, चलता रहूंगा। चाहता हूं कि मैं संग रहूं। क्या हम इतनी कथा सुनने के बाद एक-दूसरे से द्वेष नहीं छोड़ सकते? मैंने आपसे कौन-सी दक्षिणा मांगी? हर क्षेत्र में समधर्मी को आपस में द्वेष! आपस में द्वेष! सोचो। संघर्ष सदैव उष्णता पैदा करता है, उष्मा पैदा नहीं करता। समाज में उष्मा पैदा होनी चाहिए। और विवाद उष्णता ही देता है, संवाद सदा उष्मा देता है। द्वेष छूटे। खुले मैदान में परमात्मा ने ओक्सिजन दिया है, स्पर्धा क्यों करते हो? तुम्हारे फेफड़ें जितनी ले सके, ले लो प्राणवायु, लेकिन एक-दूसरे से लड़ रहे है! द्वेष-द्वेष, हर एक क्षेत्र में! हर जगह विरोध! एक ओर सभी विद्यायें बड़ी रीच होती मुझे दिखाई देती है और दूसरी ओर हर जगह संघर्ष! ये मेरे से आगे न बढ़े! सम्राट का बेटा एक-दूसरे की दाढ़ी में हाथ डाले तो सम्राट को मुंह छुपाना पड़ता है! हम परमात्मा की औलाद है। अपनी मेहनत, अपना पुरुषार्थ, अपना प्रारब्ध। क्यों किसीका द्वेष करे? क्यों स्पर्धा में ऊतरे? जो किसी का द्वेष न करे, किसी की कामना न करे उसको कृष्ण नित्य संन्यासी का बिरुद देते हैं। और कोई छाप-तिलक की जरूरत नहीं; हो तो सन्मान है।

मैं एक बार मुंबई से राजकोट जा रहा था। एक भाई मेरे साथ था। इन्कमटेक्स का बड़ा ओफिसर था। रात को कोई फ्लाईट थी और मैं बैठा-बैठा माला करता था। मैं पहचानता नहीं था। तो मैं उनसे क्या बात करूं? तो, मैं माला करता था। ये बार-बार मेरे सामने देखे! मैं उसके सामने देखूं तो फिर जाय! हमारी हरिफ़ाई शुरू हुई! मैंने सोचा, वो बीमार होता जा रहा है मेरी माला के

कारण! फिर उससे रहा न गया। ये बनी घटना है। तो, मैंने दो बार तो देखा फिर छोड़ दिया मैंने कि मेरा समय बरबाद हो रहा है। एक घंटे की फ्लाईट थी। उससे नहीं रहा गया। फिर मैंने निमंत्रित किया, आपको कुछ बात करनी है? बोले, 'बात नहीं करनी है। एक बात कहनी है।' कहो। उसने कहा -

माला फेरत जग मुआ गया न मन का फेर।
कर का मनका डारि दे मन का मनका फेर।

इस साखी का अर्थ क्या है? मैंने कहा वाह, आपका कहना क्या है? मैंने कहा, आपको आपत्ति क्या है? मैंने आपको डिस्टर्ब न किया। आप तनख्वाह आती है तो पगार के रूपिये गिनते हो? बोले, वो तो गिनना पड़ता है। तो तू माल गिनता है, मैं माला गिनता हूं। लेकिन उसके मन का संशय नहीं गया। मन का संशय मिटाने के लिए भी विवेक चाहिए। उसे कैसे समजाऊं? गुजरातीमां कहे तो, खाखरानी खीसकोली आंबाना रसने शुं जाणे? तूने कभी हरिनाम नहीं लिया!

मेरे भाई-बहन, प्रार्थना करूं, मेरी एक मांग है; अल्लाह करे कोई हारे ना, लेकिन कभी प्रारब्धवश हार कोई मुश्किल आये तो हरि का आश्रय करना। हे माँ, हे मौला, हे मेरे ठाकुर, जिसको पुकारो।

'महाभारत' का एक पात्र है, लक्ष्मणा। दुर्योधन की पुत्री। भगवान योगेश्वर की पुत्रवधू है। कुछ पात्र आज भी अनछुए रह गये। बड़ा महिमावंत पात्र है। धृतराष्ट्र दुर्जन था, दुर्योधन भोला था। जाननेवाले जानते थे कि दुर्योधन को चढ़ाया जा रहा है। कृष्ण की पुत्रवधू होने के नाते लक्ष्मणा ने कृष्ण की उत्तरावस्था में गोविंद की सेवा बहुत की है। और कृष्ण उस समय शताधिक है, बहुत दीर्घायु है। अद्‌भुत मानव अवतार था ये! उनको नित-नूतन हमने पाया है। शताधिक उम्र होगी कृष्ण की। शरीर के धर्म तो सबको लागू होते हैं।

भगवान के रात्रि का शयन का समय हुआ। पुत्रवधू लक्ष्मणा ने ठाकुर के पलंग को ठीक किया। और कृष्ण को कहती है, पिताजी, सो मत जाना, मैं अभी आई। लक्ष्मणा गई और दूध-हल्दी डाल के स्वर्ण प्याले में लेकर आती है। आप दूध पी लीजिए। गोविंद ने दुग्धपान किया, जल पीया। चादर कंठ तक ओढ़ा दी, पैर छूए, आप विश्राम करो। आज लक्ष्मणा जाते-जाते रुक जाती है। गोविंद ने पूछा, बेटी, कुछ कहना है? तू पूछ ले, बेटा। पिताजी, हम तो जीव है, आप तो ब्रह्म है। आपकी लीला समझ में नहीं आती। जानने की इच्छा भी नहीं है। सेवा मिली बहुत कृपा हुई। लेकिन जीव की ये अवस्था जब हो तो आप मुझे कहे तो विश्व को संदेश मिलेगा।

हम सबके लिए लक्ष्मणा का प्रश्न था कि आप तो ब्रह्म है, लेकिन जीवदशा में ऐसी स्थिति हो तो कोई एक ऐसा सरल उपाय बता दो पिताजी, कि जीव इससे राहत अनुभवे। तब कृष्ण कहते हैं, बेटी, हरिनाम, हरिनाम, हरिनाम। मैं मेरे श्रोताओं को कहता रहता हूं कि कोई नाम, कोई स्मृति, चाहे जिसकी हो। व्यासपीठ के पास कोई दीवार नहीं है। चाहे ठाकुर, चाहे बुद्ध, चाहे कोई भी सार तो यही है, हरिनाम। हरिनाम की महिमा वर्णन का विषय नहीं है साहब! खाखरा की खिसकोली को क्या खबर पडे कि कबीरसाहब की साखी का दुरुपयोग करे! मैंने कहा, छोड़ो सा'ब! फिर उसने दूसरा प्रश्न किया कि आप खिड़की से क्या देखते हैं? उस दिन दूज की रात थी। मैं चांद देख रहा था। और चांद के पीछे मेरा महादेव दिखता है -

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।

तो, मैं आपसे निवेदन करूं, छाप-तिलक उसकी महिमा है। हम जबरदस्ती ना करे, लेकिन मूलतः तो बुद्धपुरुष सबसे मुक्त कर देता है। छाप-तिलक सब उठा लेता है, छिन लेता है। तो, एकाग्रता और एकांत में फ़र्क है। जहां तक एक मौजूद है तब की स्थिति बिलग है और जहां एक का भी अंत हो जाय, न कोई बचे तब बात खतम!

विभीषण ने कहा, ठाकुर, मैंने कई रथ देखे हैं; मुझे नहीं लगता दुनिया में कोई ऐसा रथ हो जिसकी आप चर्चा कर रहे हैं कि 'जेहि जय होइ सो स्यंदन आना।' ये आना कौन? ये कौन-से रथ की आप चर्चा करते हैं? तब प्रभु रथ का वर्णन शुरू करते हैं। स्थूल रथ में बैठा जाता है और राम जिस रथ का वर्णन करते हैं उसको अंत:करण में बिठाना पड़ता है। ये है धर्मरथ। शौर्य और धैर्य दो पहियें है इस रथ के और निष्ठा है धरी। पहियें घूमे, धरी ना घूमे। निष्ठा न घूमे, भटकाव ना हो। और शौर्य दो प्रकार के होते हैं। एक उग्र शौर्य, एक सौम्य शौर्य। कई लोगों की वीरता में उग्रता होती है, कई लोगों की वीरता में सौम्यता होती है। परशुराम भी अवतार है, राघव भी अवतार है। लेकिन परशुराम का धरमरथ एक पहिएवाला है। उनमें शौर्य बहुत है, धैर्य बिलकुल नहीं! बार-बार गुस्सा करते हैं। राम की शूरवीरता सौम्य है, उग्र नहीं। जहां-जहां ठाकुर ने दंड लिया उस समय उसकी उग्रता नज़र नहीं आती, सौम्यता नज़र आती है। शूरवीरता सौम्य होनी चाहिए।

हनुमान में शौर्य भी है, धैर्य भी है। और निष्ठा की धरी। मेरा भरत वीरता और धीरता। शत्रुघ्न वीरता और धीरता। लक्ष्मणजी में शौर्य है, धैर्य नहीं। लक्ष्मणजी में मूल वस्तु नहीं है। तो धर्म खंडित? धर्म क्या? मेरे तो

राघव, एक तू है। मेरे तो एक मात्र तू प्रभु। राम स्वयं धर्मपुरुष है। और तुलसी ने धर्मरथ की शुरूआत की तो पहले पहिए से की। फिर आकाश के बीच में जो वस्तु है उसकी मध्य में चर्चा की। हमें क्या है, हम धर्म में सीधा गगन की ही बात करते हैं! धरम करो तो मोक्ष मळे! धरम करो तो विमान आवे! धर्म जमीन पर होना चाहिए। जहां है वहां हमारी धार्मिकता।

सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।

सीधी आकाश की बात है। विभीषण, जिससे विजय प्राप्त होती है वो धर्मरथ के पहियें। और सत्य और शील ध्वजा और पताका। धजा एक होती है। तुलसी कहते हैं, सत्य धजा है और शील पताकायें है। सत्य एक ही होता है, शील बहुत होते हैं। कोई गुणशील, कोई विनयशील, कोई विद्याशील, कोई क्षमाशील, विवेकशील, धर्मशील। लेकिन सत्य एक होता है। धजा फ़हरती है। दंड को हिलना नहीं चाहिए। सत्य फ़हरना चाहिए, फ़फ़ड़ना नहीं चाहिए। धजा के आकार भिन्न-भिन्न है। धजा की बहुत सृष्टि है। लेकिन तत्त्वत: एकम् सत्य। मेरी घडी में बारह बजकर चौबीस मिनट हुई है। पांच मिनट बैठो। अब बारह बजकर सत्तावीस मिनट। तो आप मुझे पूछोगे, घडी में कितने बजे तो मैं कहूंगा कि बारह बजकर चौबीस मिनट वो भी सत्य था, बारह बजकर सत्ताइस मिनट वो भी सत्य है। कृष्ण के सत्य के बारे में जो उंगलियां उठाते हैं उसने धजा का फहरना किसी ने नहीं देखा! उसका सत्य काल और देश के आधारित था। जैसे घडी का सत्य है। और पांच मिनट के बाद दूसरा निवेदन करना पड़ेगा कि बारह बत्तीस हो गई।

मुझे एक निवेदन करना है। कर्ण वैष्णव है, जिस तरह मेरी तलगाजरडी आंखों ने पहचाना ये वैष्णव है। ये वैष्णवी दीक्षा कर्ण ने भीष्म से ली। भले आमने-सामने थे! भीष्म महा वैष्णव। 'महाभारत' का कोई परम वैष्णव है तो दादा भीष्म। और दीक्षा कर्ण ने नहीं ली। देखते दीक्षित हो गया! साहब, ताकते रहने से ताकत मिल जाती है। भक्ति को ताकते रहो, बल आयेगा। कर्ण वैष्णव है; भालावाला वैष्णव, मालावाला नहीं! ये तो कवच-कुंडल छिन लिये दगाबाजों ने! कर्ण जानता था। कर्ण वैष्णव है। कर्ण की माँ कुंता वैष्णव है। जरूर अन्याय हुआ है कर्ण से। पांडु और कुरु के पुत्रों की परीक्षा द्रोणाचार्य आदि ने जो शिक्षा दी थी उस समय जो कर्ण की एन्ट्री हुई थी। गर्जना करते आये थे! रुको, कृपाचार्य पूछ लेते हैं, आप कौन है? यहां क्षत्रियों के बेटे की परीक्षा है। बोले, किस कुल में जनम लेना ये मेरे हाथ में नहीं, लेकिन पुरुषार्थ मेरे हाथ में है। कुंती का बेटा है इसलिए कर्ण वैष्णव है।

'सत्य सील दृढ ध्वजा पताका।' और सत्य तब तक फहरता रहेगा जब तक दंड सलामत है। युद्ध में जब तक धजा दिखाई दे तब तक उसी पक्षवाले को लगता है कि वीर अभी वीरगति को नहीं पाया। जिसकी सत्य की धजा गिरे ना वो वीरगति नहीं, परमगति प्राप्त करता है। आज भी ये शिरस्ता है कि राष्ट्र की कोई महान व्यक्ति जाती है तो ध्वज झूक जाता है। ये संकेत है कि कोई गया।

तो, भगवान विभीषण को कहते हैं, धर्मरथ की धजा सत्य है और छोटे-बड़े शील उनकी पताकायें है। विभीषण, तू तो बोल, तेरे भाई ने लात मारी तो मेरे पास क्यों आया? किस बात पर तूने मेरी शरण का सोचा? 'तुम्हारे सत्य की धजा मैंने लंका से देखी।' तो बोले, मेरे पास रथ नहीं तो धजा कैसी? बोले, अब आप वर्णन कर रहे हैं, दिमाग में आने लगा। रावण से कहा, दशानन, मैं सत्य के शरण जा रहा हूं। तो, पृथ्वी पर लगे पहियें की बात पहले की। बाद में आकाश में फहरती धजा की चर्चा और फिर भगवान राम विभीषण से कहते हैं बल, विवेक, दम और परहित ये चार घोड़े हैं। तीन प्रकार की लगाम क्षमा, कृपा और समतारूपी रज्जु से उसको पकड़े रखे हैं। उसकी चर्चा कल करेंगे। आज की कथा को विराम।

मानस-धरमरथ

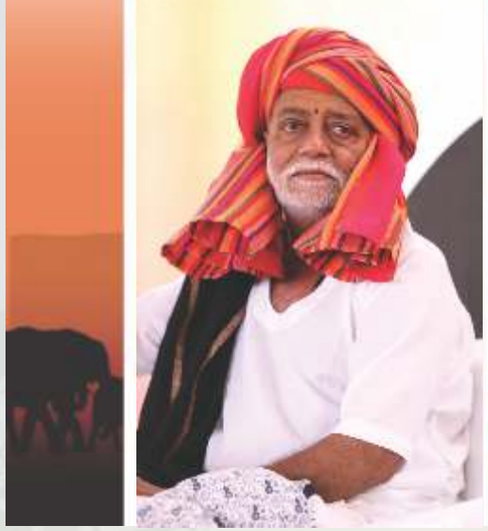

।।४।।

सब छोड़कर भाग जाना धर्म नहीं है, सब में रहकर भी जाग जाना धर्म है

बाप, चौथे दिन की रामकथा के आरंभ में आप सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। कल ग्रीन हिल्स होटेल में सायंकालीन तीन घंटे के लिए जो एक काठियावाड खड़ा हुआ था उसके लिए मेरा आनंद व्यक्त कर रहा हूं। सबका दर्शन ऊंचाई पर जाने लगा था और ऐसा करीब-करीब बहुत से रसों का समन्वय हो रहा था, स्वागत है। आदमी को स्वाध्याय, कथन और गायन में कभी प्रमाद न करना चाहिए। और ये मैं नई चेतनाओं में देख रहा हूं इसलिए प्रत्येक मंच रिच होता जा रहा है।

मैं आशीर्वाद नहीं दे सकता, शुभकामना व्यक्त कर सकता हूं। इक्कीसवीं सदी शाप की सदी नहीं है, इन्सान को सावधान करने की सदी है। सावधान करो कि बचके चलना। पुराणों शाप से भरा है! कभी-कभी मुझे लगता है कि तुम्हारी उग्र तपस्या का परिणाम क्रोध? तुमने पाया क्या? तुम्हारी उग्र तपस्या का परिणाम शापित बोली? और मुझे लगता है, शाप वो ही देता है जो खुद होता है! मुरादें हो पूरी! और आश्रित को कौन-सी मुरादें होती है? पैसा कमाने की? नको। 'शिवसूत्र' में लिखा है, जो विद्या के मारग चलेगा उसको 'श्रीयाम् पादुका:।' लक्ष्मी उनकी पादुका बन जाती है। और मैं समाज को कहना चाहूंगा कि मेरे सब कला और विद्या के उपासक चार्ज के लिए प्रोग्राम नहीं करते, रिचार्ज होने के लिए प्रोग्राम करते हैं।

चांद बनना, लेकिन पूर्णिमा का नहीं, बीज का कि अभी और व्यवस्था है आगे बढ़ने की। क्योंकि पूर्णिमा का होते ही कृष्णपक्ष लग जाता है! और पूर्णचंद्र को राहु का भय है, बीज के चांद को किसी का भय नहीं। बीज का चांद तो शिवभूषण है। विद्या शिवभूषण है। कला

मेरा ये सब योजनाबद्ध नहीं है, आशीर्वादबद्ध है। मैं चाहता हूं मेरा श्रोता स्वतंत्र हो, उसकी निजता में हो। कोई प्रवचन बाद कोई सिद्धांत उसको दबा न दे, क्योंकि आखिर व्यस्तता से त्रस्त आदमी को निजता में लाना है। वो कहीं फिर बंधन में ना डूब जाय! मैं व्यासपीठ से बोल रहा हूं इसलिए नहीं, ये मेरा पचपन साल का अनुभव बोल रहा है कि कथा जैसा कोई माध्यम नहीं है, जो आदमी की सोच को शुद्ध करे। कथा मानी व्यासपीठ ही नहीं, हर मंच आज इतना समृद्ध होता जा रहा है। ये बहुत बड़ा काम हो रहा है।

शिव का आभूषण है। वाणी की सहजता, वाणी की सादगी, वाणी की साधुता भरी प्रस्तुति यही कला की सजावट है। जीव चाहता है पूर्ण हो जाऊं। शिव कहता है, पूर्ण होने में फायदा नहीं। खुमारसाहब का एक शे'र है -

मेरे राहबर मुझको गुमराह कर दे।
सुना है कि मंज़िल करीब आ रही है।।

मेरी बीज बढ़ती रहे। लेकिन पूर्णिमा न हो। गर्व कियो सोई नर हार्यो!

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं।
नया है जमाना, नई रोशनी है।
न हारा है इश्क, न दुनिया थकी है।
दीया जल रहा है हवा चल रही है।

न प्रेम करनेवाले हारे, न निंदा करनेवाली दुनिया थकी! और देखना, समांतर लाईन कभी एक नहीं हो सकती। दिखती है एक हो जायेंगे। इसलिए इक्कीसवीं सदी को चाहिए इस गलीवाला उस गली में जाए। यहां क्या कोई एक तो हो ही नहीं रहा, क्योंकि समांतर है।

एक नगर में दो समांतर गलियां थी। एक दिन एक साधु निकला। वो उस गली जा रहा था। वहीं से वो अचानक उस गली में चला गया। क्या अर्थ है इस विचार का? मुझे इतना ही लगता है कि साधु ही एक गली से दूसरी गली में जा सकता है कि मंदिर हो, मस्जिद हो, गुरुद्वार हो, मठ हो, पीठ हो, क्या फ़र्क पडता है? लेकिन एक गली से दूसरी गली में जानेवाला कोई पहुंचा हुआ साधु ये कार्य करता है तो गलियोंवालों को तकलीफ़ होती है! कुछ बच्चों ने उस साधु को देख लिया। साधु की आंख में आंसू था तो बच्चे रोने लगे! बच्चों ने बात फैलाई। युवाओं को खबर दी, एक आदमी रो रहा है, शायद कोई मर गया है। युवानों ने बूढ़ों को कह दिया। बूढ़ों ने दूसरी गली में खबर कर दी। दूसरी गली ने पूरे गांव में खबर दी। कारण कोई खोजा नहीं! ये गलियोंवालें कारण नहीं खोजते कि साधु की आंख में आंसू क्यों आये? वो सब्जी काट रहा था। सब्जी गरम थी इसलिए आंख में पानी आया था! बात इतनी फैली कि कोई अगम्य न समझ में आये ऐसा कोई अशगुन इस नगर में आ रहा है, गांव खाली करो! हम गांव खाली कर देते हैं, लेकिन गली नहीं छोड़ते! समांतरता हंमेश एक डिस्टन्स बनाये रखते हैं। और ये बच्चें ने प्रचार किया। झूठा प्रचार कौन करते हैं? बालपंडित! यस, पंडित तो है, लेकिन बच्चें है! बालपंडित से अल्लाह बचाये! साधक अपनी साधना में थकता नहीं और निंदा करनेवाले निंदा करने से थकते नहीं।

कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना।
छोड़ो बेकार की बातों को कहीं बीत न जाय रैना।

तो, कल के काठियावाड को प्रणाम। 'अयोध्याकांड' में जानकीजी को राम ने कहा कि वैदेही, आप घर रहो। माता-पिता को ढ़ाढ़स होगी और आप सुकुमारी है। बनपथ के आप पथिक नहीं है। कंटक है, आप सुकुमारी है। सीयाजु ने कहा, ये आप न बोलते तो बहुत अच्छा था क्योंकि आपके बारे में मेरा जो विश्वास था वो डिग गया। मैंने आपके बारे में सुना भी, अनुभव भी किया कि आप कठोर वचन कभी नहीं बोलते। मेरा भ्रम टूटा, आप बहुत कठोर है! दूसरा मैंने सुना है, आप कभी झूठ नहीं बोलते, आप झूठ बोले!

मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू।
तुम्हहि उचित तप मो कहुँ भोगू।।

मैं सुकुमारी और आप तपस्या के योगी? आपके लिए वनवास और मेरे लिए भोग? आप झूठ बोल रहे हैं। लेकिन देवी, मैं ठीक कहता हूं कि वन के योग्य आप नहीं है। बोली, आप वन के मारग पर चलते होंगे और श्रम के कारण आपके भाल पर प्रस्वेदबिंदु आयेंगे तो देख-देखकर मैं बहुत सुखी हो जाउंगी। अपनी प्रिय व्यक्ति दु:खी हो, पसीना-पसीना हो और उसके पसीने को देखकर कोई राजी हो ये कोई प्यार है? बोली, प्रभु, ऐसा चेहरा देखूंगी तो मुझे वन नहीं दिखाई देगा, जनकपुर की पुष्पवाटिका दिखाई देगी। क्योंकि पुष्पवाटिका में जब पहली बार हम

मिले थे और सुबह का समय, शीत समय फूल तोड़ते-तोड़ते आपके सुकुमार चेहरे पे पसीना आ गया था! आपके वनगमन में मुझे जनकपुरी याद आयेगी। मेरी पर्णकुटि मुझे सुंदरसदन लगेगी मिथिला का और कनकभवन अयोध्या का। सास-ससूर समान ऋषिपत्नी और ऋषिओं को समझुंगी। रामजी ने कहा, जनकपुर में सखियां और अयोध्या में भी आपकी कई सखियां साथ आई है उसको छोड़ना पड़ेगा। बोली, मैं छोड़ दूंगी। मानो तुरंग-विहंग ये मेरी सखियां हो जाएगी। वो सब मुझे वन में मिलेंगे। वस्तु और उपकरण से सुविधा प्राप्त होती है, सुख प्राप्त नहीं होता। सुख तो पर्णकुटि में भी प्राप्त हो सकता है। जानकी सब शब्दप्रयोग करती है कि दर्भ की पथारी मेरे लिए सुखसैया है। बाकी जानकी परम्बा है।

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा।
जनु मुनिबेष कीन्ह रति कामा।

भरतजी जब चित्रकूट आये तो चित्रकूट आश्रम में भरत जैसे संत को राम में काम दिखा। रामजी जब वन में निकले तो सियाजु ने देखा, रामजी पृथ्वी को प्रणाम कर रहे हैं। ऐसा कुछ लिखा नहीं है। खोजना मत। खोजना मत, खो जाओगे! और ओशो कहा करते थे, खोजो मत, खो जाओ। तो भगवान चल रहे थे उसी समय एक-दो कांटें प्रभु के पैर में लग गये। तो भगवान बैठ गए। सियाजु आई। लक्ष्मणजी कमंडल में जल लेके आये। राम के पैर धोये। रामजी पैर पे दूसरा पैर रखकर लेटे हैं। लक्ष्मणजी को कहा, ये कंटक निकाल दे। प्रभु को कष्ट ना हो ऐसी तरह निकालने लगा। लेकिन कंटक निकलता नहीं! लक्ष्मणजी को लगा, क्यों? प्रभु को कहा, उठो, चलने लगो। बोले, क्यों? बोले, आपकी शरण में आता है उसे कोई नहीं निकाल सकता। चाहे कांटा हो या फूल हो। और जीव आचार्य लक्ष्मणजी आपका धरम है जीव को शरण में लाना। आया है उसको निकालने का दायित्व आचार्य चरण तेरा नहीं है। धरती पर प्रभु ने प्रणाम किया। सीयाजु ने कहा, मेरी माता की स्तुति कर रहे हो? बोले, हां, हे धरित्री, मेरी बिनती है कि अब तेरे शरीर पर जितने कंटक है वो छिपा ले। क्योंकि मेरे पैर में लगे वो ठीक है, लेकिन भरत के पैर में कंटक लगना नहीं चाहिए। क्योंकि उनके पैर में लगेगा तो भरत तो संत है; सुख-दु:ख समान मानते हैं। उनको कंटक लगेगा तो वो दु:खी हो जायेंगे! खुद के कंटक से दु:खी नहीं होंगे, लेकिन सोचने लगेंगे कि मुझे जो कंटक चूभे वो राम को भी चूभे होंगे! और राम की पीड़ा फिर उनकी पीड़ा हो जायेगी। इसलिए आश्रित को कोई कष्ट ना हो।

तो बाप, मैं प्रसन्नता व्यक्त कर रहा था। रथ तीन प्रकार के होते हैं। एक विवाह का रथ। दूसरा विहाररथ। समृद्ध लोग बगियों में, रथों में विहार करने के लिए जाते थे। तीसरा रणमैदान में है ये वैराग का रथ है। धर्म क्या है? धर्म विराग है। सब छोड़कर भाग जाना धर्म नहीं है, सब में रहकर भी जाग जाना धर्म है। त्याग बहुत आसान है, वैराग बहुत कठिन। इसलिए स्वामी निष्कुळानंद ने जो पद लिखा -

त्याग न टके रे वैराग विना, करीए कोटि उपाय जी;
अंतर ऊंडी इच्छा रहे, ते केम करीने तजाय जी.

तो, वो रथ विभीषण, जिससे विजय प्राप्त होती है ये कोई दूसरा रथ है, जिसमें सत्य की धजा और शील का पताका है। फिर आगे -

बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।।

भगवान राम विभीषण से कहते हैं कि सखा, धर्मरथ के घोड़ें चार है और ये घोड़ें का नाम बल, विवेक, दम और परहित। और इन चार घोड़ेंवाले धर्मरथ की तीन लगाम क्षमा, कृपा और समता रज्जु से वो जुड़े हुए हैं। उपनिषद में आध्यात्मिक वर्णन आया कि शरीर को तू रथ समझ और आत्मा को रथी समझ। बुद्धि को सारथि समझ और मन को लगाम समझ। और इन्द्रियां घोड़ें है। और सारथि है बुद्धि। बुद्धि कहे ऐसे इन्द्रिय करे। पहले इन्द्रियां चले, फिर बुद्धि को तो महोर लगानी पड़ती है। क्योंकि बुद्धिरूपी सारथि को कोई पूछता ही नहीं! और इन्द्रियां

बुद्धि को प्रलोभित करती है। बुद्धि को विफल कर दिया जाता है।

एक वस्तु युवान भाई-बहन याद रखना, बुद्धि तीन प्रकार से बिगड़ती है। एक संग से बिगड़ती है। सत्संग ना करो तो कोई चिंता नहीं, लेकिन बुद्धि को कुसंग ना हो जाय। दूसरा बुद्धि को बिगाड़ता है भ्रम। हमको मतिभ्रम होता है। और याद रखना इस कथा का सूत्र कि हमारा संदेह भी उधार है। किसी ने कुछ कहा और हमने मान लिया! हमारा विश्वास भी कहां मौलिक होता है?

हमारी तकलीफ़ ये है कि हमें इन्द्रियों के घोड़ें सारथि का माना नहीं; बुद्धि को सोचने नहीं दिया। रथी तो साक्षी है। बुद्धि को भ्रमित कर दिया प्रलोभन दे-देकर! और बेलगाम घोड़ें कहां ले जाय! इसलिए तुलसी लिखते हैं, 'बल बिबेक दम परहित घोरे।' चार घोड़ें का रथ, इसमें दो विधि है। 'महाभारत' में चार घोड़ें एकसाथ जोड़े जाते थे जो कृष्ण रथ लेकर आये और उसकी लगामें सारथि के हाथ में है। यहां ये भी एक अर्थ निकलता है कि एक घोड़ें के पीछे दूसरा घोड़ा, तीन लगामों। अब पहला घोड़ा बल है, दूसरा विवेक का घोड़ा है। बल का आगे है, विवेक का पीछे है। मतलब जिसके पास बल हो उसने पीछे विवेक होना चाहिए वर्ना बल का दुरुपयोग करने में देर नहीं लगती! और तीसरा घोड़ा इस तरह दायीं ओर का दम कहते हैं। आदमी इन्द्रियों का दमन करता है, सिद्धियों को प्राप्त करता है। धीरे-धीरे सिद्धिवान हो जाता है दम करके, तप करके। तो जिस के पास दम का घोड़ा है, मीन्स तपस्या करके इन्द्रियां दम करके जिन्होंने कोई सिद्धियां प्राप्त की। लेकिन उसके पीछे परहित का घोड़ा होना चाहिए कि सिद्धि मिले तो दूसरे का कल्याण करना चाहिए। सिद्धि मिले, परोपकार हो। परहित-परोपकार सिद्धि का सदुपयोग है।

और एक-एक घोड़ें के चार पग और दो आंखें। पहला बल के घोड़े के चार पैर और दो आंखें कौन? व्यासपीठ को लगता है, बलरूपी घोड़े के चार चरण-एक ज्ञानबल, दूसरा भावबल। आगे का बायां चरण ज्ञानबल है। उसके पीछे का चरण वो भावबल है। घोड़े का पैर आगे बढ़े उसके पीछे ही दूसरा पग पड़ना चाहिए। ज्ञानबल का जो चरण है उसके पीछे का चरण भाव का होना चाहिए। खाली ज्ञान हो और प्रेम ना हो तो 'सोह न राम प्रेम बिनु ग्यानु।' केवल विचार आदमी को जिंदगीभर शुष्क रखता है। और उसके पीछे भावबल ना हो तो आदमी कभी भीगा नहीं हो सकता। इसलिए भगवान ने कहा है, ज्ञानी भक्त मुझे ज्यादा प्रिय है। ज्ञान है और भाव नहीं तो ठीक से घोड़ा चल नहीं पायेगा। दूसरे दायीं और के दो पैर बलरूपी घोड़ें के विज्ञानबल है। भगतबापू कहते हैं -

धरती तणो पिंडो कर्यो, रज लावतो क्यांथी हशे?
जग-चाक फेरणहार हा, ए कुंभार बेठो क्यां हशे?
आकाशना घडनारनां घरने घड्यां कोणे हशे?
आकाशनी माता तणा कोठा कहो केवडा हशे?

तो, विज्ञान है बलरूपी घोड़े का एक चरण और पीछे का चरण है संवेदना। जो विज्ञान संवेदना गंवा दे वो विनाशक के सिवा कुछ नहीं! चंद घडियों में हिरोशीमा और नागासाकी को खत्म कर दिया जाय ये विज्ञान से दुनिया को क्या मिला? कहते हैं जिसने बोम्ब फेंका था वो आखिर पागल हो गया था कि मैंने ये क्या कर दिया? गांधीजी कहते थे, संवेदनाशून्य विज्ञान सामाजिक पाप है। तो, विज्ञान के चरण को संवेदना जरूरी है। तो, ज्ञानबल, भावबल, विज्ञानबल और संवेदनाबल जरूरी है। व्यासपीठ को लगता है, बलरूपी घोड़े के ये चार चरण और दो आंखें नीति और रीति। बल का उपयोग नीति से होना चाहिए। भगवान ने बल दिया हो और हम किसी को छले तो ये बलवान नहीं। बल के देवता का अपमान है। और कहा, कितना बल प्रयोग करना उसकी रीति भी होनी चाहिए। ये दृष्टिकोण हो। रावण बल का उपयोग करने गया कि मार दो राम के दूत को! विभीषण आया और कहा, नीति विरोध है। नहीं मारना चाहिए।

आपकी भुजा में बल हो लेकिन प्रयोग नीति से करो। फिर कैसे करे? रीति बताई कि कोई दूसरी सजा करो, दूत को मारना मना है। अद्‌भुत है भारत की परंपरा! पाछळथी घा करवानो तो रिवाज हतो ज नहीं! नीतिनभाई ने कविता कही थी -

सामे मळीने सौए ओवारणां लीधां छे.
पाछळ फरीने पाछां करता प्रचार नोखो!

तो बाप, बल का प्रयोग नीति से और रीति से किया जाय। कई आदमी बलवान होते हैं, पर वीर नहीं। 'रामायण' में कई ऐसे पात्र हैं, बल है, पर वीरता नहीं! जब राम ने विभीषण से पूछा कि कुंभकर्ण आया, इन्द्रजित आया तब तुने मुझे नहीं चेताया और ये रावण आया तो चेताया? बोले, महाराज, इसीलिए यहां मुझे आपको सावधान करना पड़ा, क्योंकि रावण वीर भी है और बलवान भी है।

मेरा ये सब योजनाबद्ध नहीं है, आशीर्वादबद्ध है। मैं चाहता हूं मेरा श्रोता स्वतंत्र हो, उसकी निजता में हो। कोई प्रवचन बाद कोई सिद्धांत उसको दबा न दे, क्योंकि आखिर व्यस्तता से त्रस्त आदमी को निजता में लाना है। वो कहीं फिर बंधन में ना डूब जाय! मैं व्यासपीठ से बोल रहा हूं इसलिए नहीं, ये मेरा पचपन साल का अनुभव बोल रहा है कि कथा जैसा कोई माध्यम नहीं है, जो आदमी की सोच को शुद्ध करे। कथा मानी व्यासपीठ ही नहीं, हर मंच आज इतना समृद्ध होता जा रहा है। ये बहुत बड़ा काम हो रहा है। दिला ने तीन शे'र लिखके दिये हैं। पहला परवीन शाकिर का -

चेहरा था मेरा, निगाहें उसकी।
खामोशी में भी बातें उसकी।

दूसरा दीक्षित दनकौरी का शे'र -

नमी आंखों में है लब पर मुस्कुराहट है।
होठों पर दुआ है गज़ल की बादशाही है।

और तीसरा अहमद फराज़ का -

इतनी सी बात पे दिल की धडकन रुक गई फराज़,
एक पल जो तसव्वुर किया तेरे बिना जीनेका।

'मानस' में हनुमंत वंदना के बाद नामवंदना है, हरिनाम की वंदना, हरिनाम की महिमा। और तुलसी की पूरी आस्था नाम पर है।

ये सच है कि तूने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों को रुलाया भी बहुत है।
जो बांटता-फिरता था जमाने को उजाले,
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।

मैं प्रार्थना करूं, किसी भी मारग के हम पथिक हो, निष्ठा का ध्यान रखना। एक ग्रंथनिष्ठा। सभी सयाने एकमत। लेकिन आदमी की ग्रंथनिष्ठा होनी चाहिए। दूसरा मुझे कहने दो, नामनिष्ठा होनी चाहिए। मंत्रनिष्ठा बहुत आवश्यक है, लेकिन मंत्र में विधिविधान बहुत जुड़े हैं। और हम सब ऐसे कमज़ोर जीव की थोड़ी भी चूक हो जाय तो फिर शंका-कुशंका हो जाय! इसलिए नाम जपो; कोई भी नाम। खलील जिब्रान बोलते थे, अपने बच्चे को प्रेम देना, स्वतंत्रता भी देना, लेकिन तुम्हारी पीटीपिटाई ज्ञान की बातें मत देना कि ये करो, ये करो! हमारे बाप-दादा भी यही करते थे! तो, नामनिष्ठा, ग्रंथनिष्ठा; यदि गुरुपद में हमारी निष्ठा हो तो गुरुनिष्ठा होनी चाहिए। प्रतिष्ठा पूरी दुनिया को देना, लेकिन निष्ठा गुरु को देना। गुरु निष्ठा। चौथी इष्टनिष्ठा। और इष्ट का नाम लूं तो मुझे शंकर याद आये।

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।

तुलसी लिखते हैं -

राम नाम सुर सरी सलिल।

हरिनाम और गंगाजल ये तुलसी की उद्‌घोषणा है। तुलसी ने 'रामचरित मानस' पूरा हो गया और तुलसी के सामने आकर पंडितों ने पूछा, इसमें क्या है? वेदांत है? नको; है जरूर, लेकिन उसकी प्रधानता नहीं है। सांख्य है? नको; न्याय है? नको। सब है इसमें लेकिन बताओ इसमें प्रधान क्या है? तो, तुलसी की एक पंक्ति -

एहि महँ रघुपति नाम उदारा।
अति पावन पुरान श्रुति सारा।।

नाम महिमा। फिर चार घाट की रचना की उसके बाद शरणागति के घाट से कथा का आरंभ किया। भरद्वाजजी याज्ञवल्क्य मुनि को कहते हैं -

नाथ एक संसउ बड़ मोरें।
करगत बेदतत्त्व सबु तोरें।।

'मेरा संदेह तोड़ो। रामनाम की इतनी बड़ी महिमा, अविनाशी महादेव निरंतर हरिनाम जपते हैं तो राम कौन? दशरथ के पुत्र राम वो तो मुझे पता है, लेकिन शिव जिसके नाम का जप करे वो राम तत्त्व क्या है?' तो, समस्त शास्त्रों का निचोड़ है, परम का नाम। फिर प्रयाग में रामतत्त्व की चर्चा शुरू होती है। रामकथा के पहले शिव की कथा याज्ञवल्क्यजी सुनाते हैं। एक बार कुंभज के आश्रम में शिव और सती भगवान की कथा सुनने गए। कुंभज ने दोनों का पूजन किया। सती ने उसका उल्टा अर्थ निकाला, जो घड़े से जन्मा है वो समुद्र जैसी कथा क्या गायेगा? शिवजी ने परम सुख से कथा सुनी। सती ने नहीं सुनी। फ़िर शिव और सती कैलास लौटते दंडकारण्य से गुजरे। राम अवतार था। सीता का अपहरण हुआ था और मानवलीला करते राम रो रहे थे! शिवजी ने प्रणाम किया लेकिन सती के मन में रामतत्त्व के बारे में संशय हुआ! आख़िर में सती सीताजी का रूप लेकर परीक्षा करने जाती है। सती परीक्षा करती है। उनको राम के ब्रह्मत्व का अनुभव होता है। शिवजी के पास आई। झूठ बोली। शिवजी ने ध्यान में देखा तो सती ने जो कुछ किया था वो दिखाई दिया! शिवजी ने सोचा कि सीता तो मेरी माँ है। अंदर से आवाज़ आई कि सती का शरीर होगा तब तक उसके साथ मेरा गृहस्थ संबंध नहीं होगा। शिवजी समाधिस्थ हुए। सत्तासी हजार साल बीत गए। उसके बाद शिव जागे। रसप्रद कथा सुनाने लगे।

भगवान शंकर का अपमान करने के लिए दक्ष ने यज्ञ किया। सती जाती है। वहां ब्रह्मा, विष्णु और महेश के सिवा सब देवता का स्थान है! सती से अपमान सहन न हुआ! दक्ष के यज्ञ में समाप्त हो जाती है। बाद में हिमालय की पुत्री के रूप में पार्वती-श्रद्धा प्रगट होती है। नारद आये। पार्वती तप के लिए जाती है। कठिन तप करती है। तप के परिणाम स्वरूप आकाशवाणी हुई और वरदान मिला कि तुम्हें शंकर मिलेंगे। यहां भगवान शंकर समाधि में बैठ गये हैं। और भगवान राम प्रकट हुए और शिवजी को पार्वती के साथ शादी करने को कहा। शिवजी ने हां कर दी।

धूर्जटि तैयार हुए। नंदी पर सवारी। तुलसी ने नवों रस भरे हैं और आखिर में शांत बैठे हैं। चली बारात। पूरी दुनिया से भूत आये थे! महादेव सकल कला के धाम। हाथ में त्रिशूल। बारात हिमाचल प्रदेश पहुंचती है। विष्णु-ब्रह्मा सब देवताओं का सन्मान हुआ। महाराणी मैना दुल्हे के सन्मान के लिए आती है। आरती ऊतारने आई। भगवान का रुद्र रूप देखते ही मैना महाराणी बेहोश हुई, गिर पड़ी! सखियां मैना को भवन में ले गई।

नारद, सप्तऋषि, हिमाचलपति सब अंदर आये। नारद ने समझाया, ये बेटी नहीं, सबकी माँ है। ये जगत की माँ है। और जिसका आपने अपमान किया वो शिव है। हमारे घर में ही शक्ति होती है, द्वार पर शिव आ जाते हैं, लेकिन नारद जैसा बुद्धपुरुष हमको ना समझाये तब तक हम सब धोखे में रह जाते हैं। सबको पता लगा। सब पार्वती को वंदने लगे। उसके बाद जो शंकर ने शृंगार सजा है, विश्व में ऐसा कोई दुल्हा नहीं! शंभु सिंहासन पर विराजमान हुए। सखियां पार्वती को लेकर मंडप में आती है। महादेव ने पार्वती का पाणिग्रहण किया और देवताओं ने आकाश से पुष्पवृष्टि की। ब्याह संपन्न हुआ। हिमालय पिघल चुका है। विदा हुई। महादेव कैलास पधारे। देवों ने, गंधर्वों ने महादेव की स्तुति की। कुछ काल बीता। कार्तिक स्वामी का जन्म हुआ। श्रद्धा-विश्वास से जो पुरुषार्थ प्रकट होता है वो ताडकासुर का नाश करता है।

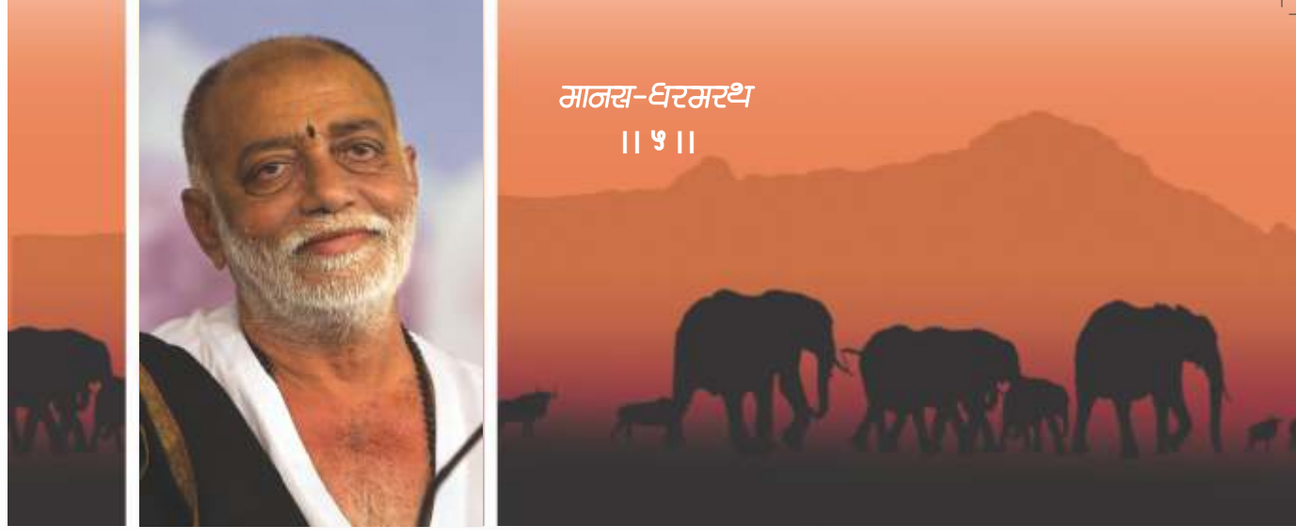

कोई भी शुभ विद्या को आत्मसात् करने का प्रामाणिक प्रयास सत्संग है

सत्संग का मतलब मोरारिबापू कथा कहे, आप सुनो इतना संकीर्ण प्लीज़, ना करो। वर्ना मेरी व्यासपीठ को आप अन्याय करोगे। सत्संग मानी सद्वार्ता; सत्संग मानी सद्कविता, सद्शायरी; सत्संग मानी सद्नृत्य; सत्संग मानी मयूरों की कला और नर्तकों को निष्पक्ष भाव से देखना। मैं कहता रहता हूं, ये धर्मसभा नहीं है मेरी। धर्मसभा कहने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन धर्म विशेषणमुक्त होना चाहिए। हमने कितनी दीवारें पैदा की! और धर्मशिक्षा लेकर यदि कोई दीवार बनाये तो द्वार रोयेंगे! सत्संग का अर्थ कोई भी शुभ विद्या को आत्मसात् करने का प्रामाणिक प्रयास।

दो-तीन दिन से हम अनुभव कर रहे हैं कि सायंकाल में ठंड उड़ जाती है! ऐसे सुंदर कार्यक्रम पेश किये जाते हैं। मुझे पूछा जा रहा है, 'बापू, आप कुछ गरम कपड़ें क्यों नहीं पहनते?' मैं कोई योगी नहीं हूं, सिद्ध नहीं हूं। मैं आपके समान सीधा-सादा आदमी हूं, लेकिन मैं हर चीज का स्वीकार करने का आदती हूं। जब आदमी शीत-उष्ण का स्वीकार कर लेता है तो किसी भी परिस्थिति में प्रसन्न रह सकता है। स्वीकार सुख है। अस्वीकार दु:ख देता है। मैं कमरे में हीटर रखता हूं। संतराम फायर लगा देता है। लेकिन मैं कमरे से निकलता हूं तो बहुत विश्वास साथ स्वीकार करके निकलता हूं कि मेरे पीछे बहुत बड़ा हीटर है। क्यों लिखा तुलसी ने? -

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

मैं आपसे कहूं, आप मुंह क्यों नहीं ढकते हो? क्योंकि आपने स्वीकार किया है, मुंह नहीं ढकना है, खुला रखना है। स्वीकार सुख प्रदान करता है, अस्वीकार दु:खद है। तो, मेरा तो जीवन मंत्र है स्वीकार करना। आप भर नींद में हो और कोई ठेस लगाये तो जग जाते हो, क्योंकि कोई ठेस लगाये ये स्वीकार नहीं है। लेकिन आप सोये और कोई तीन घंटे पैर दबाये, आप सो जायेंगे क्योंकि स्वीकार है।

'लंकाकांड' का मैदान है, दशानन रथ में आरूढ है। विपरीत बात तो ये है कि जिसके बाप के नाम के पीछे 'रथ' है, दशरथ; उसके बेटे के पास रथ नहीं और जो बिलकुल दस मुख, जिसके नाम के पीछे 'मुख' है, मुख भोग का प्रतीक है, उनके पास रथ है! यही तो समाज

की विपरीत दशा का नाम है! कल कठोपनिषद की बात आपके सामने स्मृति में आई। शरीर रथ है। और बुद्धि सारथि है। लेकिन सारथि को चाहिए रथी के आदेश का पालन करे। घोड़े के आदेश का नहीं। हमारी बुद्धि इन्द्रियों के आदेश का पालन करती है। इसीलिए बुद्धि इन्द्रियवादी हो गई। बुद्धि को चाहिए आत्मवादी बने। तो, बहुत से रथ मेरी नज़र में दौड़ते दिखाई रहे हैं। लेकिन यहां जो रथ का वर्णन है, अपने ढंग से अनोखा है।

इस धर्मरथ के चार घोड़ें - बल, विवेक, दम, परहित। बल के साथ विवेक है और दम के साथ परहित है। तीन प्रकार की रज्जु से उसको नियंत्रित किया गया है। क्षमा, कृपा और समता। दूसरा घोड़ा विवेक। तो, हम सोचे कि इस विवेकरूपी घोड़े के चार चरण कौन है और दो आंखें कौन है? व्यासपीठ को अपनी जिम्मेवारी से कहने दो कि विवेकरूपी अश्व के चार चरण है। एक पैर का नाम है लौकिक विवेक। कैसे बैठे, कैसे बोले, कैसे उठे, कैसे सुने, कैसे खाये, कैसे पीए, कैसे बिलग हुए, कैसे जुड़े ये सब जो है। लेकिन ये है लौकिक विवेक। प्रत्येक व्यक्ति में विवेक होना चाहिए और विवेक की प्राप्ति, मेरे गोस्वामीजी ने लिखा है -

बिनु सतसंग बिबेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।

विवेक प्राप्त होता है एक मात्र सत्संग से। सत्संग का मतलब मोरारिबापू कथा कहे, आप सुनो इतना संकीर्ण प्लीज़, ना करो। वर्ना मेरी व्यासपीठ को आप अन्याय करोगे। सत्संग मानी सद्वार्ता; सत्संग मानी सद्कविता, सद्शायरी; सत्संग मानी सद्नृत्य; सत्संग मानी मयूरों की कला और नर्तकों को निष्पक्ष भाव से देखना। मैं कहता रहता हूं, ये धर्मसभा नहीं है मेरी। धर्मसभा कहने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन धर्म विशेषणमुक्त होना चाहिए। तो सामाजिक दृष्टिकोण से हम विभक्त हो चुके हैं और नाम दिया धरम का! मैं कविवर रवीन्द्रनाथ को याद करूं, 'डोमेस्टिक वोल्स।' हमने कितनी दीवारें पैदा की! और धर्मशिक्षा लेकर यदि कोई दीवार बनाये तो द्वार रोयेंगे! खिडकियां खुली रखो प्यारो! भारतीय वेदांत ने कहा, 'आनो भद्रा क्रतव।' हमें सत्य जहां से मिले हम लेने के लिए तैयार है। हम बंधियार हो चुके हैं।

राशिद किसे सुनाउं गली में तेरी गज़ल,
उनके मकां का कोई दरीचा खुला न था।

शोभितभाई ने कल लिख के दिया -

कावादावामां खुंपायुं नहीं कदी,
ओलियाने भेख बहु भारे पड्यो।

कुछ कविता धरती से निकलती है, कुछ आसमां से ऊतरती है। कोई कविता जल में से प्रकट होती है। जैसे लक्ष्मीरूपी कविता जल से प्रकट हुई। पार्वतीरूपी कविता हिमालय से प्रकट हुई। द्रौपदीरूपी कविता यज्ञकुंड से प्रकट हुई। मेरी जानकी ये धरती की कविता है। ये सब कवितायें हैं, पात्र नहीं है।

'महाभारत' के पांच 'क' मुझे बहुत प्रिय है। क्रिष्ना-द्रौपदी, कृष्ण, कुंती, कर्ण और कृष्ण द्वैपायन व्यास। क्या अद्भुत लिखा व्यास ने! और व्यास ऐसे सर्जक भी है, कवि भी है और 'महाभारत' का पात्र भी है। 'नमोस्तुते व्यास विशाल बुद्धे।' संकीर्ण बुद्धि नहीं, विशाल बुद्धि। राम ने हिंदुधर्म का रथ नहीं बनाया। बुद्धधर्म का रथ नहीं बनाया। मुस्लिम धर्म का रथ नहीं बनाया। कोई नाम नहीं, केवल धर्म। महोब्बत का रथ, रेहमत का रथ, सत्य का रथ और करुणा का रथ।

उनकी रेहमत का झुम्मर सजा है।
कमलीवाली की मेहफ़िल सजी है।

सूफ़ी कहता है, मुझको मेहसूस ये हो रहा है, तेरी महेफिल में करुणा भरी है। शे'र सुनिए -

एक समंदर ने आवाज़ दी,
मुझ को पानी पिला दीजिए।

●

दर्द ने गाया विना रोया करो,
प्रेममां जे थाय ते जोया करो।
लो हवे कैलास खुदने कांध पर,
राह कोईनी क्यां सुधी जोया करो?

धर्म का अर्थ है सत्य-प्रेम-करुणा। धर्म में खटपट ना हो; नेटवर्क ना हो; कावादावा ना हो। जितनी लोकप्रतिष्ठा बढ़े टेक्स चुकाना ही पड़े। नरसिंह मेहता जेल में गया! क्या गुनाह नरसिंह का? दामोदर को भजा वह उनका गुनाह? मीरां का कौन-सा गुनाह? कृष्ण से महोब्बत की वो गुनाह? और महोब्बत गुनाह है तो हजार बार करने दो! क्योंकि मेरे राम का ये सिद्धांत है, रामराज्य का ये प्रधान सूत्र है -

सब नर करही परस्पर प्रीति।

सब में प्रीत। सत्य खुद के लिए रखो। सत्य हमारे लिए हो। प्रेम एक-दूसरे के लिए हो और करुणा सबके लिए हो।

तो बाप, विवेक आता है सत्संग से। और सत्संग का मतलब जहां से शुभ प्राप्त हो ऐसा संग। सत् यदि कठोर हो तो भी उसका संग। एक अर्थ में संग मानी कठोरता। हम कहते हैं, ये आदमी संगदिल है। पत्थर यदि प्रेरणा दे कि इससे गंगा निकलती है तो करो हिमालय की परिक्रमा। जहां से मिले ले लो। फूल से भी ले लो सत्संग। एक सितारा चमके और आंखों में बिजली कोंध जाय, सत्संग है। पूजा-पाठ करे उसको प्रणाम। हम क्यों किसी की निष्ठा पर प्रहार करे? हमें हमारी निजता में जीने दो। प्रज्ञाचोरी! मैं कभी भूल जाउं तो बात ओर है, लेकिन मैं किसी का एक शे'र, किसी की कोई पंक्ति, किसी का एक वचन, किसी की एक जोक बोलता हूं, प्रस्तुत कर्ता का नाम बिना बोले नहीं रहता। क्योंकि मुझे बोज़ ना होना चाहिए। बशीर बद्रसाहब की पंक्ति है -

अच्छा तुम्हारे शहर का दस्तूर हो गया।
जिसको गले लगाया वो तो दूर हो गया।
कागज़ में दब के रह गये कीड़ें-किताब के।
दीवाना बिन पढ़े-लिखे मशहूर हो गया।

इसलिए जो पा गया उसको हमने दीवाना कह दिया! मीरां गांडी, नरसिंह गांडो, तुकाराम गांडो, जलाराम तो एवो गांडो के पोतानी पत्नी आपी दीधी!

मेरे भाई-बहन, सत्संग का अर्थ कोई भी शुभ विद्या को आत्मसात् करने का प्रामाणिक प्रयास। नात-जात नो जोवाय। कुर्रान का काजल जिसने आंजा हो उसको कोई पराया नहीं दिखता। उसको कभी द्वन्द्व नहीं दिखता। महोब्बत की आंख कहां है?

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।

महोब्बत करनेवालों की निगाहें कुछ और होती है। आंख जैसी कोई भाषा नहीं। बच्चा कौन-सी भाषा जानता है? अपनी माँ की आंख देखता है तो मुस्कुराने लगता है। कौन कहता है आंखों को जुबा नहीं होती? शंकर को गा लो, मुक्ति मुठ्ठी में। माला करो नहीं तो कोई बात नहीं। उस पर हाथ लगाओ तो भी बहुत! स्वीकार करो। आदमी कैसा भी हो, गले लगाओ। कोई भी जाति, वर्णभेद कोई नहीं। 'शून्य' पालनपुरी -

छुं शून्य ए न भूल ओ अस्तित्वना खुदा,
तुं तो हशे के केम पण हुं तो जरूर छुं!

परमात्मा तू हो कि ना हो खबर नहीं, लेकिन मैं तो हूं।

कोई भेद नहीं। साबून से कपड़ा धोने से मेल तो निकलता है, लेकिन साबून भी न रह जाना चाहिए। ऐसे पुण्य से पाप धोने के बाद पुण्य भी निकाल देना चाहिए। क्योंकि पुन्य का कचरा रह जाता है! फिर क्या होता है? मैं दानी, ये पुन्य का मेल है। मैं तपस्वी, ये पुन्य का मेल है। मैं यज्ञ करता हूं; मैं कथा कहता हूं, ये पुन्य का मेल है।

'रामचरित मानस' के राम रावण को भी मार देते हैं, वालि को भी मार देते हैं। रावण पाप है। वालि पुन्य है। आपको आश्चर्य होगा। वालि पुन्य है, अच्छा आदमी है। रावण तो ऐसी दलील करता है कि अच्छी-बुरी मुझे जो सीख मिली है वो वालि से ही मिली है। मैं इतना बुरा नहीं था। तमे छ महिना गुलाबनुं फूल बगलमां राखो तो तमारी बगलमां गुलाबनी वास आवे। वालिए छ महिना रावण ने बगलमां राख्यो एटले वालिए एना भाईनी पत्नीने चोरी, आजे रावणे रामनी पत्नीने चोरी! आ संस्कार आव्या। जेनो संग करो एना संस्कार आव्या

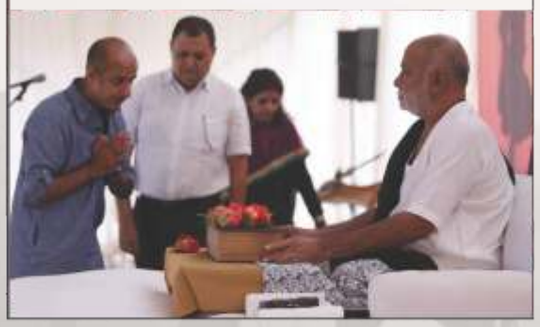

विना रहेता नथी। फिर भी वालि पुन्य है। पुन्य न होता तो ये शब्द नहीं बोलता, 'राघव मैं तो कसोटी कर रहा था। लेकिन आपके सामने मेरी चतुराई, मेरी होशियारी पानी-पानी हो गई! प्रभु मेरे समान पुन्यशाली कौन? तेरा दर्शन कर रहा हूं!' अपनी संतान की भुजा राम के हाथ में सौंप दे वोही वाली है, बाकी तो सब मवाली! वालि जो है, अपनी संतान को सत्य के हाथ में सुप्रत करे। वाली दशरथ है, जिसने राम-लक्ष्मण विश्वामित्र को दिये। ये वाली है। लेकिन प्रभु ने दोनों को मारा। रावण को भी, वालि को भी। पाप-पुन्य दोनों खतम हो। पुन्य का साबुन रहना नहीं चाहिए।

आ तरफ माजा मूकी छे पंडिते।
बीजी बाजु शेख बहु भारे पड्यो।

बाप, हमारी संकीर्णता ने हमें अधार्मिक बना दिये हैं! सत्संग को फ्रेम में मत रखो। डायरो मारो सत्संग छे। मुशायरो मारो सत्संग छे। महेफिल मारो सत्संग छे। मुझे जो मेरे जीवन के आंतरिक विकास और विश्राम के लिए उपयोगी होता है, मिल जाता है, आनंद आता है। बाकी मारे 'रामायण' पूरतुं छे. मारे आमां बधुं आवी गयुं।

विवेकरूपी अश्व के चार चरण। एक चरण है लौकिक विवेक, वाणी का विवेक, श्रवण का विवेक, किसी को सुनना कैसे चाहिए इसका विवेक चाहिए। मैं दो-चार कथाओं से कहता हूं कि भगवान कृष्ण ने योजना बनाकर कर्ण के कवच-कुंडल क्यों छिन लिए? मुझे लगता है, कृष्ण ने कर्ण का श्रवण-विज्ञान छिन लिया, क्योंकि कर्ण के ये जो कान रहेंगे तो मेरी 'गीता' अर्जुन से पहले वो सुन लेगा! और वो सुन लेगा तो मेरी 'महाभारत' की सभी बाजी खत्म हो जाएगी। अर्जुन तो दलीलें भी करेगा। ये तो एक ही शब्द! क्योंकि उसके पास ईश्वरदत्त श्रवण है। कथा भी सुनो और चुनो। आपकी रुचि के अनुसार चुनो, आपका हो गया। कवच क्यों ले लिया? संवेदनाशून्य कर दिया। थोड़ा संवेदनाशून्य हो जाय तो ही भरसभा में दुर्योधन इतना पाप करेगा। और पाप का घडा भरा जाएगा तभी तो मैं

उसका निवारण कर सकूंगा। उस समय कर्ण की संवेदना नहीं थी।

मैं आप-से एक मेरा अनुभव कहूं कि रास्ते में चलते हैं। हमारी आंखें ठीक है। हम सावधान है। संभलकर चलते हैं। फिर भी अचानक ठोकर लग जाय और नख निकल जाय तो ठोकर लगे इससे पहले की दो-तीन मिनट का ख्याल करना, तुम में कौन-सा विचार आया था? ये विचारों का तुरंत दंड है! चमड़ी संवेदना का प्रतीक है। श्रवणविज्ञान, नयनविज्ञान, जुबांविज्ञान। देखने का एक विवेक होना चाहिए। कहने दो, आदमी को वेश का भी विवेक होना चाहिए। लिबास का विवेक। अमुक स्थान पर आने के बाद वेश का विवेक गंवाये तो टीकाएं बहुत होती है! और साधना के क्रमशः विकास में साधक में ये अपनेआप आ जाता है।

दूसरा चरण का अश्व का अलौकिक विवेक। माँ-बाप का पैर छुए ये तो लौकिक है, लेकिन कोई दूसरे मज़हब का आदमी बात करे उसको भी विवेक से बात करो ये हमारा अलौकिक विवेक है। दूसरे को निम्न समझे ये खुद अपनेआप में निम्न है। गोस्वामीजी का सूत्र, पेड़ काटे, पल्लव सींचा! हे कैकेयी, तूने पेड़ काट दिया और पत्ते को सींचा! विवेक चुक गई! मछली को जीवित रखने के लिए तू पानी खाली कर रही है! तीसरा विवेक है आत्माविवेक।

ज्यां सुधी आत्मा तत्त्व चीन्यो नहीं,
त्यां लगी साधना सर्व जूठी।

मेरा और आपका सबका आत्मविवेक होना चाहिए। हरिश्चंद्र ने शरीर बेचा, आत्मा नहीं बेची। हो सके तो आत्मा न बेचना; मन को भी न बेचना; बुद्धि न बेचनी; चित्त न बेचना; अहंकार जो अस्मिता के रूप में हो उसे न बेचना। और ब्रह्मविवेक, परमात्मविवेक ये चौथा चरण है। और विवेकरूपी अश्व की दो आंखें हैं। बड़ी प्यारी दो आंखें एक समता, दूसरी ममता। विवेक में समदृष्टि हो। और उसे ये विवेक है कि ममता मार देता है तो योगी होगा। लेकिन हमारे जैसे को ममता रखनी पड़ती है। 'सबकर ममता ताग बटोरी।' तुलसी ने कहा, सबके ममता के तागे को बटोरकर एक रस्सी बना और राम कहते हैं, मेरे पैरों में बांधकर खींच। तेरी ममता की रस्सी से ही मैं तेरे घर में आउंगा। जिसमें विवेक होगा ये कभी भेद नहीं करेगा।

तो, समता और ममता दो आंखें है। तीसरा घोडा है दम। दमरूपी घोडें के चार चरण है-मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। दम का एक अर्थ है दमन करना, कंट्रोल करना, वश करना। वश करना है तो मन को करे और वो भी बातचीत करके। मन खराब नहीं। भगवान कृष्ण 'गीता' में कहते हैं, इन्द्रियों में मन मैं हूं। मन परमात्मा है। इसके साथ लड़ाई क्यों? थोड़ा सम्यक् किया जाय। दूसरा चरण है बुद्धि। सम्यक् बुद्धि। ओवर बुद्धि मुश्किल में डाल देती है। और कम बुद्धि भी मंद बुद्धि आ जाती है। ऐसा कोई बुद्धपुरुष हमें मिल जाय जो हमारी बुद्धि को सम्यक् कर दे। हम सबका अनुभव होगा। हम जहां जाते हैं। होटल में रहे जो कमरा हमको दिया हो, आदमी दस मिनट में इस कमरे में पंखे की स्वीच कहां है, हीटर की कहां है, सब जान लेते हैं। गज़ब है! अस्सी-अस्सी साल जिस कमरे में रहे उनकी स्वीच हम नहीं जान पाये कि मेरे क्रोध की स्वीच कहां है, मेरे बोध की स्वीच कहां है? और जब स्वीच हम ना देख पाये तो बुद्धि की स्वीच के लिए कोई बुद्धपुरुष का आश्रय करना। 'सम्यक् बुद्धि' तथागत का शब्द है। सम्यक् सोच।

चित; 'योग चित्तवृत्ति निरोध।' पतंजलि भगवान कहते हैं चित्तवृत्ति का निरोध ही योग है। और ये 'निरोध' शब्द मुझे कड़क लगता है। हमारे जैसे का काम नहीं! योगी लोग कर सकते हैं। लेकिन हम इतना ही समझे, चित्त सम्यक् हो बस। चित्त की वृत्ति को दिशा दो।

विक्रेतुकामा किल गोपकन्या
मुरारिपादार्पितचित्त वृत्तिः।

जो दूसरी चित्त की वृत्ति जाती थी उसको कृष्ण चरण में लगा दी। और अहंकार; हम आदमी है, अहंकार तो

आएगा, लेकिन तुलसीदासजी ने दिशा दी, अहंकार को थोड़ा मोड़ दो।

अस अभिमान जाई जनि भोरे।
मैं सेवक रघुपति पति मोरे।।

'मानस' का सूत्र कहता है, हे प्रभु, मेरे मन से ये अहंकार कभी ना जाय। कौन-सा? परमात्मा मेरा मालिक है और मैं उसका सेवक हूं। 'मैं' तो वहां भी आया, लेकिन ये 'मैं' सार्थक है, व्यर्थ नहीं। और किसी भी व्यक्ति की कमज़ोरी को आप जान लो, जिंदगीभर तुम्हारे दबाव में रहेंगे। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार के घोड़ें की जो आध्यात्मिक आंखें हैं वो आंख है मन की कमज़ोरी को देख लेना। मन की कमज़ोरी क्या है साहब, एक ही क्षण में उसी क्षण में मन दो जगह कभी नहीं रह सकता। हमने मन पर बहुत काम किया, सोचा नहीं, मनमानी की! ऋषिमुनियों ने मन पर बहुत काम किया। मन की कमज़ोरी ठीक से समझे कि एक ही क्षण अभी मैं जो बोल रहा हूं, मेरा मन वहीं होता है, दूसरी जगह नहीं जा सकता। ये मन का स्वभाव है और ये ही स्वभाव उनकी कमज़ोरी है। जो मन की इस कमजोरी को जान लेता है वो सम्यक् होने में बहुत सफल हो जाता है। एक ही क्षण में दो नाव में पैर नहीं रख सकते क्योंकि ये मन का स्वभाव है, दो जगह एक ही क्षण में ठहर नहीं सकता। वहां गया तो यहां नहीं। मन की कमज़ोरी पकड़ो, मन हमारे वश हो जाएगा। और दूसरी दृष्टि, मन की शुभवृत्ति भी समझ लो। उनमें जो शुभ तत्त्व है, शुभ होगा तभी तो कृष्ण ने अपनी विभूति कहा होगा। मन के शुभ-अशुभ स्वभाव की पहचान नज़र में आ जाय तो मन साधना में बहुत मदद करता है।

निझामुद्दीन ओलिया की घटी घटना। पीर सोये हैं। अमीर उसके चरण दबा रहा है। आज क्या हुआ, मन देखो, मालिक की सराहना करनेवाला अमीर दबाते-दबाते एक क्षण मन दूसरी ओर गया, क्या ये बुद्धपुरुष है कि मेरे जैसा बुद्धिजीवी उसका चरण दबा रहे हैं! साधना में बहुत सावधान रहना। कहीं दाग ना लग जाये। ये मेरे साथ खाता है, बैठता है, विनोद करता है। तो क्या ये पहुंचा हुआ फकीर है? उसी समय निझामुद्दीन ओलिया ने करवट बदली और अमीर को कहते हैं, बेटा अमीर, तू भी करवट बदल दे। सोच की करवट बदल। निझाम को क्या लगे उसकी चिंता नहीं, तेरी बंदगी विफल जायेगी! और सावधान हुआ, पीर मुझे माफ कर! कोई भी बुद्धपुरुष को आश्रित थोड़ा भी चुके तो पीड़ा होती है। पके हुए आश्रित को गुरु की खुश्बू आती है। मेरे गुरु ने इस दिशा में मेरी ओर देखा लगता है। अमीर जा रहा था और निझामुद्दीन ओलिया के जूते लेकर कोई जा रहा था। तुरंत ऊंट पर सवार अमीर ने कहा कि मुझे मेरे पीर की खुश्बू आ रही है। आदमी को कहा, तलाश करो। गये तो एक गरीब आदमी जा रहा था। पूछा तो बोले, बेटी की सादी थी, निझामुद्दीन के पास गया था। उसने जूती दी, ठीक है, ले जा रहा हूं। मेरे पीर की जूतियां? कहां है? आंख डबडबा दी! बोले, मेरी जिंदगीभर की कमाई जो पोठ में भरी है, मैं तुझे दे दूं। ये जूतियां मुझे दे दे। सब दे दिया। पीर की पादुका दे दी। दौड़ता, रोता हुआ आया, ये आपकी जूती। अमीर, कहां से लाया? बोले, गरीब आदमी से। कितने में ली? बोले, जिंदगीभर की कमाई दे दी। बोले, तुने बहुत सस्ते में ली।

धर्मरथ का चौथा घोड़ा परहित। उसके चार चरण सद्भाव, साधुभाव, चित्तभाव और खुद का स्वभाव। आपको किसी को कुछ देना हो, किसी का हित करना हो तो किसी का हित करो तो सद्भाव से करो। साधुभाव और सद्भाव में अंतर है। सद्भाव जमीन पर, साधुभाव उड़ता घोडा, आसमान पर! सद्भाव में ये भाव आ जाय कभी कि उसने मेरा बुरा सोचा तो मैं सोचूं तो क्या कुसूर? लेकिन साधुभाव में उसने कितना भी बुरा किया, मैं अपने मन क्यों बिगाडुं? तीसरा चित्तभाव, चित्त में एक स्फुरण हो जाय कि परमात्मा, उसका भला हो। और मैं अनुभव के साथ कहता हूं कि रेंटिया का बड़ा पहिया एक बार घूमे तो तकली हजार बार घूमती है। हम तो तकली है, हरि एक बार याद करे, हम एक सौ आठ

बार। किसी के चित्त में हमारी स्मृति। क्या पता है रात को सोने के बाद सुबह जाग सके कि न जाग सके? लेकिन कोई जगानेवाला है। सवाल है भरोसे का। चौथा चरण है स्वभाव। परहित प्रभाव के कारण मत करना, स्वभाव के कारण करो। सेवाना जेने हेवा होय एने रूपियो न होय तोय ए सेवा करतो होय! देखादेखी नहीं, स्वभाव। और उसकी दो दृष्टि है, अहंशून्यता कि मैं परहित कर रहा हूं, ऐसी कोंपले नहीं फूटनी चाहिए। अहंमुक्ति से सेवा हो। और दूसरी आंख सेवा करने का आदमी को करने के बाद कोई कुछ कहे इनकी अपेक्षा न हो। अंदर से शांति मिले कि हे मालिक, मैं कर सका। परहित किया है उसका अंत:करण में आनंद हो जाय। तो ये चार चरणवाला घोडा, उनकी दो आंखें।

बल विवेकदम परहित धोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।

तीन लगाम है। पहली लगाम क्षमा। बलवान को क्षमा से कंट्रोल करे। बल का कंट्रोल क्षमा से किया जाय। दूसरी कृपा। कृपा विवेक से होती है। रामकृपा बिना सत्संग नहीं और सत्संग के बिना विवेक नहीं। और समता की रज्जु चाहिए। कभी-कभी जहां ममता होती है, परहित कर लेते हैं, लेकिन पक्षपात हो जाते हैं। तो, समता रज्जु से धीरज से उसको जोड़ो।

ईस भजनु सारथी सुजाना।
बिरति चर्म संतोष कृपाना।

धर्मरथ की तीसरी बात आती है, सारथि कौन? तो बोले, परमात्मा का भजन ही उसका सारथि। हमारी जिंदगी का सारथि कौन? बंदगी। हमारे रथ का सारथि ईश्वर का भजन हो। भजनरूपी कितने सारथि है, उसकी चर्चा कल करेंगे।

भगवान शंकर को पार्वती ने पूछा है, रामतत्त्व क्या है? निराकार साकार क्यों हुए? शिवजी ने पांच कारण बतायें। प्रतापभानु के कारण दिखाते हुए शिव ने कहा, प्रतापभानु दूसरे जनम में रावण हुआ और उसने कोप मचाया। पृथ्वी अकुला उठी पापाचार से। राम के जन्म के पहले रावण के जन्म की कथा कही। पहले निशिचर वंश की कथा, फिर रघुवंश की कथा। क्योंकि पहले रात होती है, उसके बाद दिवस। सबको लेकर धरती ब्रह्मा के शरण में गई। ब्रह्मा ने कहा, मेरे वश की बात नहीं, हम सब मिलकर परमतत्त्व की स्तुति करे।

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवंता।
गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुसुता प्रियकंता।।

आकाशवाणी हुई, 'धैर्य धारण करो, मैं मेरे अंशो के साथ अयोध्या में प्रकट हो जाउंगा। प्रतीक्षा करो।' अयोध्या के वर्तमान सम्राट वेदविदित दशरथ। कौशल्यादि प्रिय रानियां लेकिन एक ही पीडा है, पुत्र नहीं है। राजा अपने अभाव को गुरु समक्ष व्यक्त करते हैं। वशिष्ठजी ने कहा, धैर्य धारण करो। एक नहीं, चार पुत्रों के पिता हो जाओगे। शृंगी को बुलाया। पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। यज्ञप्रसाद बाहर आया। दशरथजी के हाथ में दिया। प्रिय रानियों को बुलाकर दशरथजी ने प्रसाद बांटा। आधा प्रसाद कौशल्या को। पा भाग कैकेयी को। पा भाग के दो भाग करके सुमित्रा को दिलवाया। चैत्रमास, शुक्लपक्ष, नौमी तिथि, मध्याह्न का भास्कर, अभिजित नक्षत्र, भौमवार। मध्यदिन है। पूरा अस्तित्व गीत गा रहा है। नदियों में अमृत बहने लगा। हरि आने की बेला है। देवता अपने-अपने स्थान में स्तुतियां करके गए। जगनिवास परमात्मा माँ कौशल्या के महल में ब्रह्म होकर आये। कौशल्या ने देखा और तुलसी ने गाया -

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

माँ ने कहा, नारायण के रूप में नहीं, नर के रूप में आ। चार भुजा नहीं, मुझे मानव चाहिए। भगवान बालक बन गये। बच्चे बनकर माँ की गोद में आकर रोने लगे। बालक का रुदन सुनते रानियां दौड़ आई! माँ कौशल्या के भवन में अलौकिक बालक रो रहा है! दासियों ने बधाईयां शुरू की। बधाई हो, लाला भयो है! बधाई हो, केन्या की व्यासपीठ से पूरे संसार को मेरे ठाकुर के जनम की बधाई।

कथा-दर्शन

- कथा जैसा कोई माध्यम नहीं है, जो आदमी की सोच को शुद्ध करे।
- बुद्धपुरुष क्या करता है? साधक का द्वैत छिन लेता है।
- कोई भी बुद्धपुरुष को आश्रित थोड़ा भी चुके तो पीड़ा होती है।
- प्रेम और अध्यात्म में तृप्ति होती ही नहीं, तृषा ही होती है।
- सत्य रहता है जीभ में, प्रेम रहता है हृदय में और करुणा रहती है आंखों में।
- सब छोड़कर भाग जाना धर्म नहीं है, सब में रहकर भी जाग जाना धर्म है।
- धर्म को चाहिए अपनी भुजायें विशाल रखे।
- इक्कीसवीं सदी शाप की सदी नहीं है, इन्सान को सावधान करने की सदी है।
- वैकुंठ जाने की जिद्द मत करो, वैकुंठी जीवन जीओ।
- प्रतिष्ठा पूरी दुनिया को देना, लेकिन निष्ठा गुरु को देना।
- जो असंग होता है वो ही सबमें फैलता है।
- महानता उपकरणों से नहीं प्राप्त होती, अंत:करण की विशुद्धि से होती है।
- कला किसीको भी मालिकत्व नहीं देती, किसीको भी आधीन नहीं होती।
- सच्चा विचार दुश्मनों से मिले तो भी ले लेना और बुरे विचार मित्र से मिले तो मुंह मोड़ लेना।
- खलों की प्रीत बीजली की चमक जैसी होती है।
- जिसका चित्ततंत्र डामाडौल है, वहां संदेह उठेगा।
- मुस्कुराहट देना मेरी दृष्टि में बहुत बड़ा दान है।
- शूरवीरता सौम्य होनी चाहिए।
- विवाद उष्णता ही देता है, संवाद सदा उष्मा देता है।
- स्वीकार सुख है। अस्वीकार दु:ख देता है।
- वस्तु और उपकरण से सुविधा प्राप्त होती है, सुख प्राप्त नहीं होता।

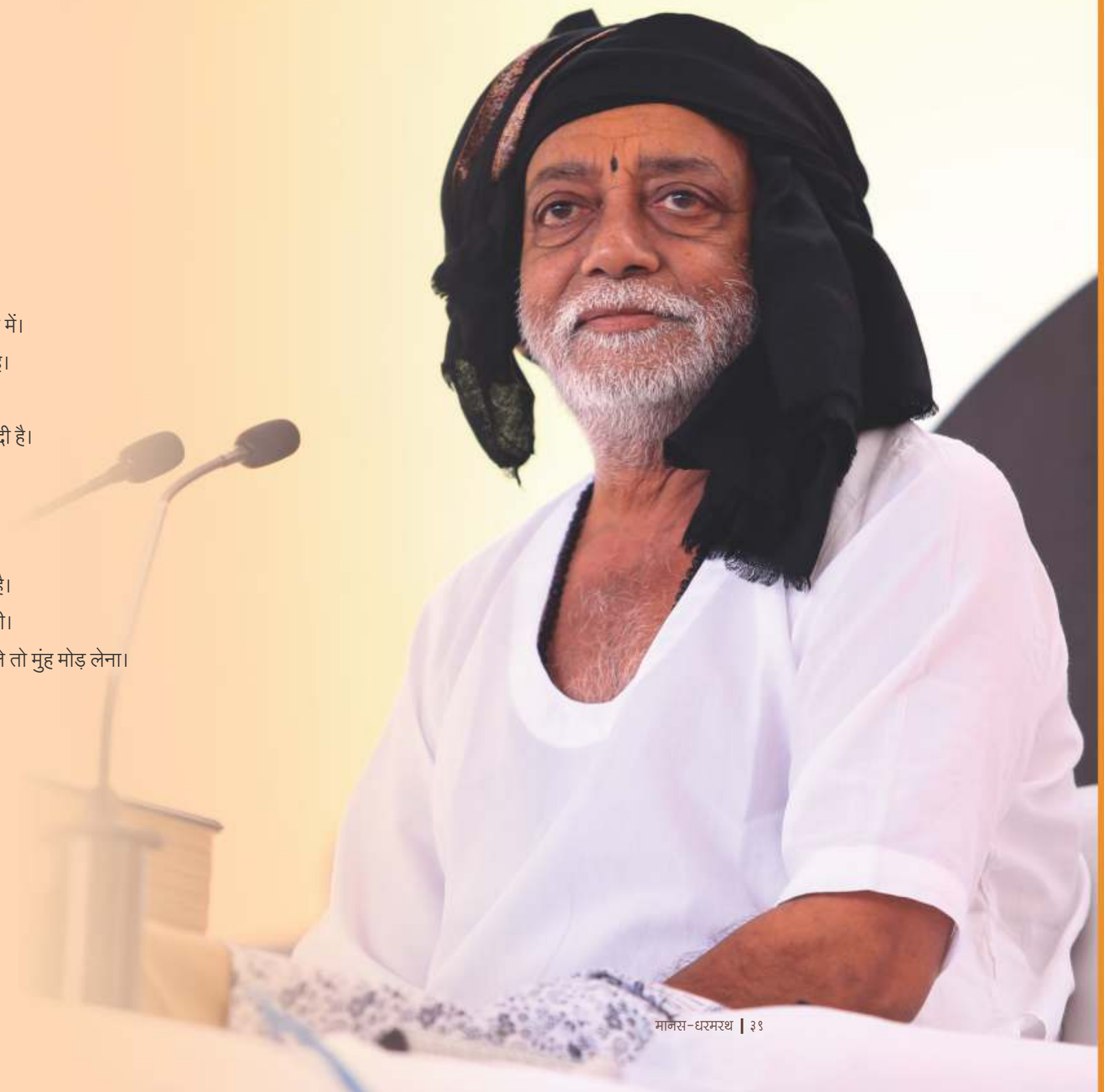

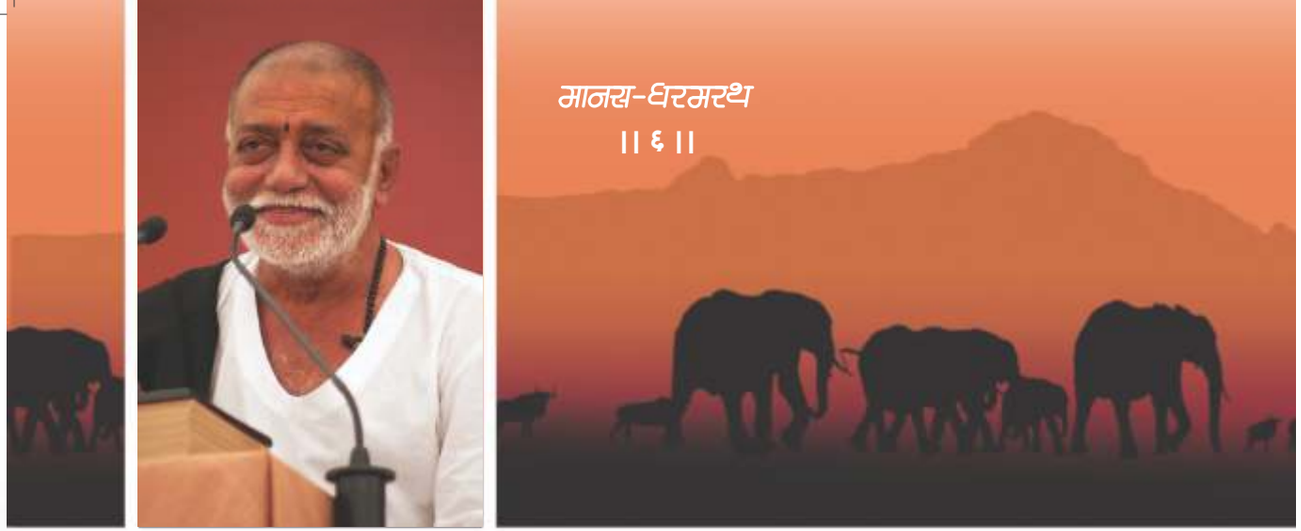

चौपाई में कभी उतरे ना ऐसा नशा है

राम का ये मिशन था कि पवित्र लोगों को बाद में मिलूं, पहले जो अपवित्र हो चुके है उनको मिलने जाउं। और ऐसे राम की यात्रा है। वो सेतु बना सकते हैं। हम नहीं कर पाते, क्योंकि हम छोटी-छोटी विचारधाराओं से विघटित हो चुके हैं! और भरत भी डायरेक्ट राम के पास नहीं गये। पहले गुह के पास गये। भरत की महानता देखो! पहले निषाद को मिले। मेरा धर्म ये है, जो पतित है, जो वंचित है, समाज का जो आखिरी व्यक्ति है उसको गले पहले लगाउं। और जिसने अंतिम आदमी को गले लगाया उसको राम दौड़कर गले लगाते हैं।

कथा-विषय में प्रवेश हो इससे पूर्व कल सायंकालीन सत्संग में संतवाणी, लोकगीत और गीत प्रस्तुत हुए। सबने अपनी-अपनी जगह से अपने ढंग से सबको प्रसन्नता प्रदान की। मैं आप-से बात करना चाहता हूं कि कल राधा-कृष्णवाला रास यदि हमें कुछ समय के लिए स्पेस में ले गया तो पांच हजार साल पहले जो रास हुआ हो वो धरा का नहीं होगा, अधरा का होगा। और मुझे 'श्रीमद् भागवतजी' के शब्द का पावन सहारा है, 'अधरामृतम्।' ये धरा का अमृत भी था, धरा से मुक्त अमृत भी था। गोपीजन गाती है -

तव कथामृतं तप्तजीवनं
कविभिरीडितं कल्मषापहम् ।
श्रवणमंङ्गलं श्रीमदाततं
भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः ।।

ये अधरामृत पर बहुत बड़ी-बड़ी व्याख्या है, श्रीमन् महाप्रभुजी वल्लभाचार्य से लेकर। कल भीमा की मंडली का रास देखते हुए मैंने तीसरी बार उसका दर्शन किया। एक-एक स्टेप उपर जा रहा है! कला जिनके पास भी हो, कुंआरी ही होती है। कोई ऐसा न कह सके कि मैं उसका स्वामी हूं। कला किसीको भी मालिकत्व नहीं देती, किसीको भी आधीन नहीं होती। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं, खुश रहो बाप!

कुछ जिज्ञासायें है। 'बापू, कृपया आप ये बताये आपकी दिनचर्या क्या है?' अब मेरी दिनचर्या जानकर क्या करोगे? मैं आपसे कहूं कि मैं गरमागरम चाय पीता हूं सुबह। तो, आप आदत ना हो तो पीओगे? लेकिन आपने पूछा है तो मैं भगवान कृष्ण की दिनचर्या क्या थी ये

बताउं? वो मुरारि की दिनचर्या जान लो तो दूसरे मुरारि की दिनचर्या जानने की जरूरत नहीं होगी। और केशव की इतनी प्रेक्टिकल दिनचर्या है कि हम सब कर सके यदि प्रामाणिक हो तो।

भगवान श्रीकृष्ण की दिनचर्या बताई है ग्रंथ में। व्यासजी ने कहा है। और व्यास कृष्णकाल के सर्जक है। उसने कहा, योगेश्वर सुबह से रोज की तरह अपना जागने का, उठने का जो अपना समय होगा, सबसे पहले सुबह-सुबह में कृष्ण ध्यान करते थे। अब भाष्यकारों ने ये पकड़कर चर्चा शुरू कर दी कि ये वो किसका ध्यान करते थे? किसी ने लिखा है, शिव का ध्यान करते थे। किसी ने लिखा है, वो राधेजु का ध्यान करते थे। किसी ने लिखा है, वो कृष्णा को-द्रौपदी को याद करते थे। कोई कहता है, वो प्रणव के नाद के साथ ध्यान करते थे। ये सब अपनी-अपनी राय है। सबने कृष्ण की इस क्रिया पर आभूषण चढ़ायें। सत्य पकड़ना मुश्किल है। कृष्ण किसका ध्यान करते थे वो मत देखना। वो ध्यान करते थे। आपको जो ध्यान ठीक लगे। यदि आपको रुचि है, करने का स्वभाव है, समय है, समझ है तो ध्यान करना। ध्यान पतंजलि का विज्ञान है। अष्टांग योग में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रतिहार, ध्यान, धारणा, समाधि। कृष्ण ध्यान करते थे बस। सभी को करना आवश्यक नहीं है! ठंड लगे तो न भी किया जाय! ध्यान साधना का एक पड़ाव है। भगवान कृष्ण ध्यान करते थे उसके बाद स्नान करते थे। जो आपको कृष्णक्रम मैं कह रहा हूं। इसका मतलब ये नहीं कि हम स्नान न करे! लेकिन न हो तो न हो!

ध्यान, स्नान उसके बाद तीसरा क्रम था दिनचर्या का गूढ मंत्र का जप करना, गोप्य मंत्र। उस पर भी भाष्यकार टूट पड़े कि किसी ने कहा, ये 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' का मंत्र जपते थे। किसीने ये कहा कि ये 'ॐ नमः शिवाय' जपते थे। किसी ने कहा कि ये केवल एकाक्षर मंत्र 'ॐ' का जप करते थे। किसी ने कहा कि वो गायत्रीमंत्र का जप करते थे। प्रेममार्गीओं ने कहा कि वो केवल 'राधे-राधे' का जप करते थे। तो कई लोग कहते हैं, वो अर्जुन का स्मरण करते थे। ये हो सकता है। मुझे इतना ही कहना है, क्यों ये सब अपना-अपना मत डाला जा रहा है? जब लिखा है कि कृष्ण कोई गोप्य मंत्र का जप करता था, तो गोप्य ही रहने दो। लिखा है गूढ मंत्र फिर चर्चा की जरूरत नहीं! और मंत्र को गोप्य रखा जा सकता है। 'मानस' में लिखा है -

जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ।
फलइ तबहिं जब करिअ दुराऊ।।

जोग, युक्ति, तप और मंत्र तभी फलित होता है, जब उसको छिपाया जाय। इसीलिए हमारे यहां कोई गुरु मंत्र देता है तो गोप्य रखता है, दूसरे को हम नहीं दे सकते। इसलिए 'कान फूंक्या' एम कहेवाय छे। कान फूंकना मानी गोप्यता का एक प्रतीक है। मैं इतना कहूं कि कृष्ण जो मंत्र विचारता हो; मंत्र मानी विचार भी है। वो तीसरा दिनचर्या का पडाव था मंत्रजप।

तो, ध्यान, स्नान, मंत्रजप। चौथा, कृष्ण यज्ञ करते थे। कृष्ण अग्निहोत्री थे। नित्य हवन करते थे। इवन रणांगण में भी जब वो सारथ्य करने के लिए निकलते थे इससे पूर्व वो अपनी दिनचर्या का परिपालन कर लेते थे। आप कहे, रोज हम कैसे यज्ञ करे? तो यज्ञ के कई प्रकार है। 'यज्ञानां जपयज्ञोस्मि।'-'भगवद्गीता।' अथवा तो मेरे तुलसी ने एक यज्ञ की स्थापना की 'विनयपत्रिका' में कि आदमी ऐसा भी यज्ञ कर सकता है -

संसय-समिध अगिनि छमा।

यज्ञ करो, कौन-सा यज्ञ? यज्ञ करने के लिए अग्नि चाहिए। समिध चाहिए। घी चाहिए। बलि चाहिए। बलि मीन्स वो नहीं।

प्रेम-बारि-तरपन भलो, धृत सहज सनेहु।
संसय-समिध, अगिनि छमा, ममता बलि-देहु।।

तरपन करना है तो तुलसी कहते हैं, प्रेम के जल से तरपन करो। आंखों के जल से तरपन करो। सहज स्नेह घी है। जितने भी स्निग्ध पदार्थ है उसको संस्कृत में स्नेह कहते हैं। स्नेह का घी। कितना सरल यज्ञ कर दिया! तुम्हारे मन

में छोटे-बड़े एक-दूसरे प्रति जो संशय है, वहम है उसका समिध कर दो। वो लकड़ियां डाल दो। क्षमा की अग्नि जलाओ। क्रोध की अग्नि तो सुनी थी। लेकिन क्षमा की अग्नि। दूसरों ने तुम पर संशय किया तो बदला मत लो। क्षमा की अग्नि में संशय को डाल दो, हवन कर दो। मैंने कल कहा कि बल के घोड़े की लगाम है क्षमा। इसको कंट्रोल करो। जो किसी को दगा दे, जो किसी को छले उसी समय उसको नींद न आये। आदमी अपने आपको छिपाये वो तो चालाकी है! हम और आप आध्यात्मिक कैसे बन पायेंगे, कैसे? How we can reach there? हमें जो लक्ष्य प्राप्त करना है वहां कैसे पहुंचे? चालाकियां झूठ है। हापुडीदादा का शे'र है -

अपना चेहरा देख न पाए,
औरों को शीशा दिखलाये।
इस दुनिया में कौन बुझाये,
जब पानी ही आग लगाये!

बिलकुल धरावाला शे'र। सावधान! यदि प्रसन्नता से जीना है तो हरि ने जो महामूल्यवान देह दिया, शरीर दिया, जीवन दिया इसमें मौज करनी है तो ये सब दो कोड़ी के खेल छोड़ने पड़ते हैं। हम बलवान है तो किसी को जीत लिया ये कोई जीत नहीं। मुझे कंस का निवेदन बड़ा प्यारा लगता है। दिनकरभाई जोशी ने लिखा है, कंस को जब कृष्ण ने मारा तब कंस का एक निवेदन; उस वाक्य उपर वारी जाउं! कंस का निवेदन है। कृष्ण खड़े हैं। कंस निर्वाण की लम्हें पर खड़ा है, कहा कि गोविंद, कंस विजय भी पचा सकता है और पराजय भी पचा सकता है। मैं जा रहा हूं। और धन्य है वो जो विजय भी पचा पाये और पराजय भी पचा पाये।

अथ श्री महाभारत कथा ...

'महाभारत' की कथा। और आनंद की बात तो ये है कि उसके संवाद एक मुस्लिम ने लिखे हैं। इससे बड़ा समन्वय और सेतु क्या हो सकता है? ये अद्‌भुत देश है! यहां तथाकथित लोगों ने हमें लड़ाया! बाकी पहुंचे हुए ने सेतु निर्माण किया। जब मैं महुवा की प्रायमरी स्कूल में था तब हमारे एक आचार्या बहन का विदाय समारंभ था कन्याशाला में। तो हमारे महुआ के नगरपालिका का प्रेसिडेन्ट इब्राहीमभाई भी था। हम तो आसिस्टन्ट थे! तो जाना ही पड़ता! तो मैं था तो उस स्कूल का जो स्टाफ था उसने 'हनुमानचालीसा' शुरू करवाया। बापू को अच्छा लगेगा! मुझे क्या अच्छा लगेगा वो आपको मालूम ही नहीं! प्लीज़, मुझे कोई लेबल ना लगाओ! यहां मैं अजनबी हूं। तो, 'हनुमानचालीसा' शुरू हुई। अब आगे तीन-चार लड़कियां थी वो मुस्लिम समाज की बैठी थी। सातवें धोरण की लड़कियां आगे बैठी हैं और वो भी 'हनुमानचालीसा' का पाठ कर रही है। एक तो मुझे ये हुआ कि ये इस्लाम धर्म की बेटियां है उसको जबरदस्ती 'हनुमानचालीसा' दिया गया होगा? तो भी सह नहीं सकता। स्वाभाविक बोले वो बात ओर है अथवा तो ये करने की जरूरत? मैं सोच रहा था। मेरी जिज्ञासा तो दबी रह गई, लेकिन इब्राहीमभाई वो भी मुस्लिम थे। उसने पूछा लड़की को कि बेटा, तुम इस्लाम धर्म की बेटी हो और 'हनुमानचालीसा' का पाठ करती हो? उस बेटियों ने जवाब दिया है साहब कि ये हिंदु, ये मुसलमान ये तुम सब भेद करते हो! हमें क्या लेना-देना? हम मासूमों की हत्या क्यों करते हो? ये इस्लाम धरम की बेटियों का जवाब था। भेद तो हमने किया है! मैं तो गाता रहता हूं -

गोरे उसके काले उसके।
पूरब पश्चिमवाले उसके।
सबमें उसीका नूर समाया।
कौन है अपना कौन पराया।
सबको कर परनाम तुझको अल्लाह रखे ...

•

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

व्यास का अर्थ होता है औदार्य, विस्तार। ये संकीर्णता कहां से आई?

मेरे दादा, जिनसे मुझे 'रामचरित मानस' मिला वो कथा 'महाभारत' की कहते थे। मुझे सिखाया 'रामायण।' 'महाभारत' के प्रति मेरी अत्यंत रुचि ये उनके अनबोल आशीर्वाद का परिणाम है। तो हमारी चर्चा है कि कुछ समय के लिए हम होशियारी-चतुराई करके कुछ अपना काम कर लेते हैं! लेकिन अंदर से ग्लानि से भरे रहते हैं! महानता उपकरणों से नहीं प्राप्त होती, अंत:करण की विशुद्धि से होती है। यज्ञ करना है तो तुम्हारी क्षमारूपी अग्नि में छोटे-बड़े वहमों को जला दो। और बलिदान देना है, बलि देना है तो 'ममता-बलि देहु।'

तो, ध्यान, स्नान, गुह्यमंत्र का जाप; उसके बाद भगवान कृष्ण यज्ञ करते थे। उसके बाद ब्राह्मण देवता आते थे। स्वस्तिवाचन होता था। वेद का उच्चारण होता था। उसके बाद कृष्ण की दिनचर्या का आगे का कदम था दान देना। कलियुग में धर्म के चतुर्चरण में से एकमात्र दान का बचा है इसलिए आदमी को चाहिए अपनी क्षमता के अनुसार कुछ दो। अरे, कुछ ना दे पाओ तो किसी को एक मुस्कुराहट तो दो। मुस्कुराहट देना मेरी दृष्टि में बहुत बड़ा दान है।

भगवान दान करते हैं। उसके बाद जब राजमहल से राजकचेरी अथवा तो अवतारकार्य के लिए डग भरते थे तब घर में जितनी मंगल वस्तुयें थी उसको स्पर्श करते थे। मंगल वस्तु को स्पर्श करना ये कृष्ण की दिनचर्या का एक अंग था। अब आप कहेंगे कि मंगल वस्तु कौन? मुझे कहने दो, तुम्हारे घर में मासूम बच्चें है उसके सिर पर हाथ घूमाकर उसके गाल पर ऊंगलियां घूमाकर जाओ, मंगल स्पर्श है। तुम्हारे घर में तुम्हारा कोई भी पवित्र ग्रंथ निवास करता हो तो ऐसे पाक ग्रंथ को छूकर जाओ। तुलसी का गमला हो तो तुलसी के गमले को छूकर जाओ। गौमाता बांधी हो तो गौमाता पर हाथ रखकर जाओ। तुम्हारी माता ने इष्टदेव के दीप जलाये हो तो दीप को छूकर जाओ। ये सब मंगलस्पर्श है। और यहां तो ये भी लिखा है कि घर में स्वर्ण हो तो सोने को छूकर जाओ। स्वर्ण हमारे यहां पवित्र माना गया है। घर में गंगाजल हो, घर में जमुनाजल हो।

ननामि यमुनामहं सकल सिद्धि हेतुं मुदा।
मुरारि पद पंकज स्फुरदमन्द रेणुत्कटाम्।।

वैष्णवों का प्राणपद है ये। एकनिष्ठा, दृढाश्रय; लेकिन दूसरे के प्रति सूग ना हो। शैव और वैष्णवों का सेतुबंध है।

विश्वामित्रजी राम को लेने आये यज्ञरक्षा के लिए और ले गये। उसके बाद विश्वामित्रजी को चाहिए था कि राम को अयोध्या फिर लौटा दे। जो मिशन था वो पूरा हो गया था। अब यज्ञ सफल हो गया। फिर भगवान राम को विश्वामित्रजी कहते हैं, हम एक धनुषयज्ञ देखने जाय जनकपुर। धनुषयज्ञ की बात सुनते ही राम-लक्ष्मण हर्षित होकर जनकपुर जाने तैयार हुए। अब जनकपुर क्यों जाना था कि वहां जानकी है। जनकपुर क्यों जाना था कि वहां जनक है। जानकी मानी पराशक्ति। जनकपुर जाने का विश्वामित्र का लक्ष्य सीता है, शक्ति है, भक्ति है; जो आध्यात्मिक अर्थ लगाओ। और दूसरा सीता के पिता परमज्ञानी जनक है। दूसरी यात्रा का लक्ष्य था जनक और जानकी को मिलना। मेरी समझ में नहीं आता कि राम अहल्या के आश्रम में क्यों गये? आप ये भी तर्क कर सकते हैं कि रास्ते में आता था। चलो, रास्ते में आता था, लेकिन आश्रम तो रास्ते में कई आये! राम की विशालता और 'रामचरित मानस' का सेतुबंध समझे दुनिया। ये आदमी क्या जोड़ना चाहते हैं? राम चाहते थे मैं जानकी से मिलूं इससे पहले अहल्या से मिलूं। जो पतित है, उसको भी मैं समाज में स्थापित करके चलूं। ये है राम की यात्रा का लक्ष्य।

विश्वामित्र आगे है, राम-लक्ष्मण पीछे और अहल्या के आश्रम में राम के चरण रुक गये और जिज्ञासा की, 'बाबा, ये किसका आश्रम है? ये यहां कौन पड़ा

है? ये सन्नाटा क्या है?' जिज्ञासा के उत्तर में विश्वामित्र 'रामचरित मानस' में बोले -

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर।।

'यह गौतम ऋषि का आश्रम है। और गौतम की नारी एक पत्थर बनकर यहां पड़ी है। आपके चरणरज का दान चाहती है। राघव, कृपा करो।' अब विश्वामित्र-राम का अनलिखा संवाद सुनिए। 'ये शिला क्या है? ये पहले से ही शिला है कि बाद में हुई है?' विश्वामित्र ने कहा, 'ये शिला नहीं थी, हो गई है।' 'अपनेआप हो गई थी कि किसीने कर दी?' बोले, 'मुनि के शाप ने उसको शिला बना दिया। एक भूल की उसने।' बोले, 'क्या करना चाहिए?' विश्वामित्र बोले, 'आपके चरण उसके सिर पर रखो जो जीवन को हार चुकी है।' देवराज इन्द्र इस सुंदरी का रूप देखकर अपना इरादा पूरा करके भाग गया और गौतम ने शाप दिया तो इस महिला के लिए छपड़ा भी नहीं बना दिया! आदमी स्वार्थी है! निकल गया इन्द्र। गौतम भी शाप देकर निकल गया, 'चट्टान हो जा, तेरी बुद्धि कामना में जड़ हो गई, खुद जड़ हो जा!' रामजी को कहते हैं, उनके सिर पर चरण रखो।

सप्त मर्यादा: कवयस्ततक्षु:। -ऋग्वेद।

कवि की सात मर्यादा है। कवि मानी सर्जक भी। कवि मानी साधु भी। सायनाचार्य ने इस ऋग्वेद मंत्र का भाष्य किया। सात मर्यादा मानवमात्र की होनी चाहिए। कलिकाल है, कितनी निभा पाये, बात ओर है। किसान भी सर्जक है। वो भी कवि है। उसको भी ये मर्यादा लागू होती है। जो कुछ नया अर्जित करे, नयी सोच, नया मंत्र, जो नये फूल खिला दे।

रजोगुण से प्रकट होती हो ऐसी बातें ना करना। ये पहली मर्यादा; ऐसी बातें ना करना जो रजोगुण से प्रकट हुई हो। क्षत्रिय, रघुवंशी ऐसी बात नहीं करता। मेरा राम क्यों रुका है आज यहां कि मैं पैर कैसे रखूं? मुनिपत्नी है। दूसरी मर्यादा वहां सायनाचार्य कहते हैं, मद्यपान ना करे। तीसरी मर्यादा, द्यूत नहीं खेले, जुआ ना खेले। भले धर्म का अवतार हो युधिष्ठिर, लेकिन द्यूत का व्यसनी था! द्यूत के लिए बैठे और क्या परिणाम आया! रजोगुण से बातें नहीं; मयपान नहीं; द्यूत नहीं। तुझे यदि पीना आया तो किस चीज में नशा नहीं है? चौपाई में नशा है। मंत्र में नशा है। माला में नशा है।

तने पीता नथी आवडतो मूर्ख मन मारा,
पदार्थ एवो क्यो छे के जे शराब नथी।

कौन एसी चीज है जो मस्ती ना दे! नाममस्ती में भी नशा है और कभी ऊतरे ना ऐसा नशा है। व्यसन नहीं; व्यसन धीरे-धीरे छूटे। व्यसन का एक अर्थ है दु:ख। व्यसन में डूबा हुआ आदमी, दु:ख में डूबा हुआ आदमी, जितने भी दु:ख हो नीतिमार्ग छोड़ता नहीं। जैसे शेर कभी घास नहीं खाता। शिकार करना ये मर्यादा है। रक्षकों को तो जीवमात्र की रक्षा करनी चाहिए। शिकार ना करना। किसी के साथ जहां तक अनुकूल हो, जुड़े रहना। तकरार ना करना ये पांचवीं मर्यादा है। अपने जीवन में, व्यवहार में कठोर मत बनना। किसी की निंदा मत करना और जिसके लिए ये वेदमंत्र मेरी स्मृति में आया वो है, किसी स्त्री जाति का अपमान मत करना। ये सप्तमर्यादा। राम कहते हैं, अहल्या के सिर पर मैं पैर नहीं रख सकता। मैं रघुवंशी हूं।

मैं नहीं कहता। मुझे अहल्या बोलती सुनाई देती है। सुनना हो तो सब बोलते हैं। वृक्ष भी बोलते हैं। तो क्या कहा अहल्या ने? उसने कहा, राघव को कहना, मेरे सिर पर पैर रखे। कृपा करे। राघव बोले, मैं तो देखकर कृपा करता हूं। और दूसरी मेरी कृपा की पद्धति है, किसीके शरीर पर हाथ रखके कृपा करना।

'राघव, अहल्या के बारे में आपने जिज्ञासा की है तो अहल्या के हृदय की बात सुनिए जो उसने मुझे सुनाई है।' 'आंख से, हाथ से कृपा करने की क्यों मना कर रही है अहल्या?' तो विश्वामित्र बोले, 'अहल्या ने मुझे कहा कि भगवान को कहना, आंख बंद करके कृपा करे।' 'आंख बंद करके क्यों कृपा करने की बात करती है?' तो कहे, 'मुझे अहल्या ने बताया कि आंख खोलकर कृपा करेंगे तो कृपा नहीं कर पायेंगे। मेरा चरित्र देखकर ठाकुर कृपा करने से रुक जायेंगे कि ये तो पतित है! मेरा चरित्र देखेंगे तो हट जायेंगे। और हाथ से करे तो? हाथ से नहीं क्योंकि अहल्या को डर लगता है कि राम के हाथ में धनुषबाण रहते हैं। मेरे करम का दंड दे दे तो नहीं! इसलिए वो कहती है कि चरण से कृपा करे। क्योंकि अहल्या ने सुना है, तेरे चरण से गंगा निकली है।' फिर राघव ने कोई दलील ना की और कह दिया, चरण रखता हूं -

परसद पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही।

'पवित्र' और 'पावन' दो शब्द है। उसमें अंतर है। यद्यपि पवित्र और पावन पर्याय भी माना जाय। पवित्र उसको कहते हैं, उसको अपवित्रता का डर भी लगे। पावन उसको कहते हैं कि पतितों को भी पावन करे। और जैसे पावन स्पर्श हुआ और जो पतित थी, कलंकित थी, प्रकट हुई। तपपुंज; मानो सदियों से तपस्या करके कोई उठा। फिर तो अहल्या स्तुति करती है। कहती है, प्रभु शिव जिसको स्पर्श करे वो धन्य हो जाता है। आपने मुझे स्पर्श किया, मुझे कहने दो, मुझे शंकर बना दी! आपने मेरे पर चरण का दान करके मुझे शिव बना दिया। कैसे? तो बोली, पत्थर की तरह शांत तरह बैठकर सोचती कि शंकर और मेरे में साम्य क्या है और कमी क्या है? शंकर दिगंबर रहते हैं और प्रभु, मैं भी थोड़ी चूक के कारण पतित हो गई। दिगंबरता आ गई। शंकर के भाल में, शंकर को कुछ कलंक है। मेरे जीवन में भी थोड़ा कलंक है। महाराज शंकर के सिर पर गंगा थी वो मेरे पर नहीं थी, तुमने पैर रखकर मेरे मस्तक पर गंगा भी धारण करवा दी। एक कंकर को तूने शंकर बना दिया है! इसीलिए अहल्या खड़ी हुई तब जीव नहीं थी, शिव थी। केवल पतिता नहीं थी, महादेवी के रूप में, नवदुर्गावाली एक दुर्गा है।

तो मेरा सवाल आपसे ये था कि राम का, विश्वामित्र का मिशन था जानकी और जनक तक पहुंचना। बीच में यहां क्यों रुके? राम का ये मिशन था कि पवित्र लोगों को बाद में मिलूं, पहले जो अपवित्र हो चुके है उनको मिलने जाउं। और ऐसे राम की यात्रा है। वो सेतु बना सकते हैं। हम नहीं कर पाते, क्योंकि हम छोटी-छोटी विचारधाराओं से विघटित हो चुके हैं! तो यही मेरा निरंतर प्रयत्न है कि 'वल्लभाधीश की जय' के बाद 'हरहर महादेव।' और भरत भी डायरेक्ट राम के पास नहीं गये। पहले गुह के पास गये। भरत की महानता देखो! पहले निषाद को मिले। 'रामसखा' शब्द सुनकर भरत ने उसका नाम क्या है, जाति क्या है, वर्ण क्या है, कुछ नहीं पूछा। और धर्मरथ जोड़ दिया। क्योंकि भरत को लगा, मेरा धर्म ये है, जो पतित है, जो वंचित है, समाज का जो आखिरी व्यक्ति है उसको गले पहले लगाउं। और राम मुझे बाद में गले लगायेंगे। और जिसने अंतिम आदमी को गले लगाया उसको राम दौड़कर गले लगाते हैं।

मेरी इच्छा है, मैं किन्नरों की कथा करूं। किन्नरगण सांसद में भी जाते हैं। मेरे पास आये। मैं प्रधानता दूंगा। और 'मानस' में किन्नरों का भूरिश: वर्णन है। ये रामकथा है सेतुबंध। इसलिए भरत सीधे राम को नहीं मिले। पहले निषाद से मिले।

जात न पूछो साधु की।

वशिष्ठजी धर्मरथ नहीं छोड़ पाये। निषाद का परिचय दिया। वशिष्ठजी धर्माचार्य है। उसको लगा, मैं कैसे छूउं? तो बाबा रथ में ही बैठे रहे! और वशिष्ठजी की ये भ्रांति भी चित्रकूट जाते तक रही। चित्रकूट जब राम-भरत मिले और निकट से गुह का परिचय कराया गया तो -

रामसखा रिषि बरबस भेंटा।

जो गंगा के तट पर घटना नहीं घटी वो चित्रकूट घटी। वशिष्ठ के जीवन की तमाम साधना तब पूरी हुई, जब गुह को भेंटे। आज की कथा को विराम।

रामकथा आसुरी वृत्ति से मानवीय वृत्ति में दीक्षित करने की फोर्म्यूला है

मेरी व्यासपीठ से यदि आप पूछे तो मैं भजन का यही अर्थ आखिर में करना चाहूंगा कि जीवन जीने का व्यापक दृष्टिकोण भजन है और सारथ्य उसको सौंपो। अपने जीवन की बागडौर उसको सोंपो। किसी बुद्धपुरुष का दिया गया कोई सद्विचार, उसको भरोसे के साथ स्मृति में रखना ये भी भजन है। दूसरों की सेवा कर पाये तन से, मन से, धन से, सुविचार प्रदान करने से जो अपने पास है उससे दूसरों की सेवा वो भी भजन कहा गया है। तो, धरमरथ के सारथि का नाम है परम का भजन। मेरे अपने लिए जो शब्दकोश है उसमें मेरा प्रियतम शब्द है 'भजन।'

बाप, सातवें दिन की रामकथा के आरंभ में इस ठंडी में उष्मापूर्वक मेरा प्रणाम। कल शाम संतवाणी जगत के पीढ़ और पाचक संतवाणी भजनिक आदरणीय जगमालबापा ने गणेश-स्थापन किया। उसके बाद परीबापू, उसकी अपनी मौज; परीबापू ने गणेश के भाल में सिंदूर लगाया और बिरजु ने आकर कुछ वस्त्र पहना दिया अपने ढंग से। उसके बाद कीर्ति, उसने गणपति स्थापित हुआ था उसके कंठ में बिलग-बिलग तरह के अपने टुकड़े डालकर एक सुंदर माला गणेश के गले में आरोपी। और फिर कच्छ से सामंत घराना का ये और उसके साथ ढोलक पर जो थाप देता था, उसने जो संगत की, गणेश के हाथ में मोदक दे दिया! मोदक का एक अर्थ है मोद-प्रसन्नता। मोदक का थाल पेश कर दिया! भैरवी से आरती ऊतार दी गणपति की। बहुत आनंद आया। लेकिन आपने कभी पुष्टिमार्गीय वैष्णव माला देखी है? पुष्टिमार्ग में ठाकोरजी को जो माला की सेवा होती है उसमें मानो डोलर के फूल की हो, लेकिन बीच-बीच में बंध होते हैं। वो बीच-बीच का बंध था मेरा माया, वो भी एक सुंदर संचालन था! एक लीटी गाउं?

खुश रहो हर खुशी है तुम्हारे लिए।
छोड़ दो आंसूओं को हमारे लिए।

परमस्नेही अमितोष की एक किताब आज लोकार्पित होनी थी। अमितोषजी अच्छे गायक है। अमितोष शर्मा की गज़लों में किसी बुद्धपुरुष के प्रति संकेत है। हमें कोई संकेत मिलता है।

कभी ज़मीन कभी आसमां-सा लगता है।
वो एक शख्स जो मुझको खुदा-सा लगता है।
हजारों फूल महकते हैं उसकी सांसों में,
वो बोलता है तो एक गुलिस्तां-सा लगता है।

तो, भगवान राम विभीषण को कहते हैं कि हे सखा, जिससे विजय प्राप्त होती है वो रथ ओर होता है। शूरवीरता उसके पहियें है। सत्य, शील दृढ धजा-पताका है। बल, विवेक, दम, परहित घोड़ें हैं। और ये चार घोड़ें क्षमा, कृपा और समता की लगाम से जुड़े हुए हैं। और रथ का एक बहुत विशिष्ट जीवित अंग, सचेत अंग जो है वो है सारथि। धर्मरथ का सारथि कौन? दुनिया में कई रथ हमने पढ़े हैं, सुने हैं, कहां से शुरू करूं? देवराज इन्द्र जो स्वर्ग का मालिक है उसके पास एक रथ है। और इन्द्र का रथ बड़ा अद्भुत है जो लंका के मैदान में जब इन्द्र को हुआ कि भगवान तो बिना किसी सहाय से भी युद्ध जीत लेंगे और हमारे लिये वो आये हैं परमात्मा और हमने कुछ सेवा न की! इसलिए इन्द्र ने पहले तो रथ नहीं भेजा था, लेकिन बाद में इन्द्र अपना रथ भेजता है लंका के मैदान में और वहां सारथि का नाम है मातली। मातली नामक सारथि इस रथ को लेकर लंका के मेदान में आता है। लेकिन जो जानता है कि जिससे विजय मिलता है वो रथ कोई ओर होता है। उसको इन्द्र के रथ की कोई आवश्यकता नहीं थी, लेकिन मेरे राम बहुत संकोची और विवेकी है। इसलिए थोड़ा उसका उपयोग किया है।

भगवान बुद्ध, तथागत, सिद्धार्थ जब उसका बूढ़ा सारथि रथ लेकर जाता है और जहां से बुद्धत्व की प्राप्ति के बीज बो दिये थे। वो भी एक रथ है। बुद्ध के जीवन में युद्ध निर्मित नहीं हुआ, बुद्धता प्राप्त हुई एक सारथि के कुछ वचन के कारण कि यहां बूढ़ापा है, यहां दुःख है, यहां बीमारियां है, यहां मृत्यु है।

भगवान श्रीकृष्ण जब भी अपनी लीला करते हैं उसका एक खास सारथि है, जिसका नाम है दारुक। रुकमणि का हरण करने में दारुक का उपयोग हुआ। कहीं-कहीं अपने रथ का खुद सारथि रहे हैं कृष्ण। यहां वसुदेव और देवकी का ब्याह हो गया। बहन प्यारी है, बहनोई के प्रति आदर है। विदा देने रथ को जोता गया उस समय कंस ने खुद सारथ्य किया है। कंस को लगा कि मैं मेरी बहन और बहनोई के रथ का सारथि बनूं। अच्छा लगता है। लेकिन जैसे वो रथ लेकर जाता है, सारथि कंस है, उसने वाणी सुनी कि जिसको तू आज रथ में बिठाकर जा रहा है उस बहन का आठवां संतान तेरे नाश का कारण बनेगा! और यह सुनते ही कंस रथ को मोड़ता है। खलों की प्रीत बीजली की चमक जैसी होती है। पहले तो कंस सद्भावनापूर्ण लगता है। लेकिन सूचना मिली, आठवां गर्भ मार देगा तो उसी क्षण खड्ग खिंचता है! सारथि का नियम भंग कर दिया आदमी ने। बोले, मार डालूं देवकी को! ये बहन का प्रेम कहां गया?

तेरे संसार की रचना विचित्र है हरि! उसको समझना बड़ा मुश्किल है। ये जगत विचित्र है। चित्र को देखोगे तो दुःखी हो जाओगे और चित्रकार को देखोगे तो सुखी हो जाओगे। ऐसा जगतचित्र बनाया ठाकुर ने! शून्य भित्ति पर! कोई केनवास नहीं! तूने कैसे बनाया ये?

कळा अपरंपार, वाला! एमां पहोंचे नहीं विचार,
एवी तारी कळा अपरंपारजी.
मोरनां इंडामां रंग मोहन! केम भर्या किरतार?

'महाभारत' में तो यक्ष प्रश्न है तृषातुर पांडवों के लिए। सहदेव गया जल लेने के लिए और सरोवर में एक यक्ष ने पूछा कि मेरे प्रश्न का उत्तर दे, फिर जल पी वर्ना मौत! और सहदेव को खुद को इतनी तृषा थी कि सोचा उत्तर बाद में करे, पहले जल पी लूं। जल पीया ही और सहदेव की मौत! कुछ देर बाद आया नकुल। उसने

भी यक्ष प्रश्न का थोड़ा इधर-उधर अनादर किया। पहले जल पीया, मरा! फिर अर्जुन, क्रमशः वो हो जाते हैं। आखिर धर्म आते हैं। ये यक्ष के प्रश्न का उत्तर देते हैं। फिर चारों भाईयों को जीवित कर देते हैं। यक्ष ने धर्मराज को पूछा कि बोल, मैं एक को जीवित कर सकता हूं, चार में से किसको जीवित करूं? तो कहा, सहदेव या नकुल। तो यक्ष ने कहा, तेरे सगे भाई तो भीम और अर्जुन है। बोले, हम तीन कुंतीपुत्र में मैं हूं। मेरी दूसरी माँ माद्री है। उनका भी तो एक रहना चाहिए। और यक्ष खुश हो गया और वरदान देकर चारों को जीवित कर दिया। ये 'महाभारत' की प्रसिद्ध कथा यक्ष प्रश्न। लेकिन वहां यक्ष पकड़ता है। तुलसी के पद में एक मगर है वो वदन विमुख, चेहरा नहीं है और इस संसाररूपी सरोवर में जब कोई जाता है तो ये बिना मुखवाला है वो डंस लेता है। केशव, कह न जाय तेरी लीला अपार है। तो कंस ने तलवार खींची फिर उसको समझाया गया कि आठवां तेरा काल है। फिर तो जेल में बंद कर देता है। सारथ्य का कंस भंग करता है।

'महाभारत' के युद्ध में भी सारथि शैल्य है और वो तेजोवध ही करता रहा था। और 'मध्ये महाभारतम्' कृष्ण के अर्जुन के रथ के सारथि भगवान श्रीकृष्ण है। ये तो सब पुराने काल की बात है। कौन नहीं चाहता कि कृष्ण सारथि बने? हम सब चाहे कि कृष्ण सारथि बने इससे बड़ा क्या? लेकिन कलियुग में कृष्ण मौजूद नहीं है। हमारे जीवनरथ का, हमारे धर्मरथ का सारथि ईश्वर बने तो क्या कहूं? वो तो अदृश्य है। भगवान ने वालि को मारा। वालि ने ललकारा, आपने वृक्ष के पीछे छिपकर पारधी की तरह मुझे मारा! आप तो धर्मरथवाले आदमी हो। धर्म के लिए आपका अवतार है। भगवान ने एक प्रश्न पूछा वालि को कि वालि, मुझे बता कि तू मुझे ईश्वर मानता है कि मनुष्य मानता है? यदि तू मुझे मनुष्य

मानता है तो तेरी शिकायत योग्य है। लेकिन तू सुग्रीव के साथ भीड़ने के लिए आया तब तेरी पत्नी तारा ने तुझको समझाया था कि -

सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुग्रीवा।
ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा।।

सुग्रीव जिसको लेकर आया है वो परमतत्त्व है, आप मत जाओ। वालि ने कहा, तू राम की बात कर रही है? अरे पगली, मेरे समदर्शी रघुनाथ जो कदापि मुझे मार भी दे तो भी मैं सनाथ हो जाउंगा। तब लगा कि अंतर्यामी आदमी लगता है। कैसे सुन लिया उसने?

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना।

वालि ने कहा, अब मुश्किल है। आपने बात सुनी तो पक्का हो गया, आप ईश्वर है। यदि मैं ईश्वर हूं तू मान तो मैने डायरेक्ट किसको मारा? छिपकर ही सबको मारा है! आदमी को उसका कर्म मारता है। और 'विनयपत्रिका' में तुलसी ने कर्म को पेड़ कहा है। और कर्म दिखता है, ईश्वर कभी दिखता नहीं है, अरूप है।

कृष्ण को सारथि बनाना है, लेकिन क्या करे, दिखता नहीं! इसलिए तुलसी ने अद्‌भुत द्वार खोल दिया। प्रत्यक्ष रूप से प्रभु सारथि न बन सके तो -

ईस भजनु सारथी सुजाना।
बिरति चर्म संतोष कृपाना।।

इश-भजन वो सारथि है। ईश्वर सारथि बने तो कभी-कभी नियति के कारण, लोकसंग्रह के कारण, अवतारकार्य के कारण रथी को दगा करने की सूचना भी देता है, कर कर्ण पर प्रहार! अर्जुन कहे, कैसे कर सकता हूं निहत्थे कर्ण पर प्रहार? लेकिन कृष्ण ने कहा, बात नहीं, पहले उठा! ईश्वर यदि सारथि बने तो ये भी हो सकता है। लेकिन मोरारिबापू आपसे वादा कर सकता है कि ईश्वर-भजन सारथि बने तो कभी दगा न सिखाये कि तू पीछे से घा कर! ईश्वर भजनारा कदि पाछळथी घा करवानुं सूत्र शीखवे ज नहीं। 'सुजाना।' 'सुजान' शब्द 'मानस' का प्यारा शब्द है। एक आंतरिक डहापण। अब भजन मानी क्या? भजन की व्याख्या क्या? तुलसी ने कुछ संकेत दिए।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।

भगवान शिव ने पार्वती से कहा कि हे उमा, अब मैं मेरा अनुभव आपको कहता हूं। क्या? इस जगत में हरिभजन ही एक सत् है। शंकर ने जगत मिथ्या नहीं कहा, शंकराचार्य ने जगत मिथ्या कहा। शंकर ने जगत सपना कहा। विनोबाजी तो कहते हैं, ब्रह्म सत्यम् जगत स्फूर्ति। शास्त्र के कोई सूत्र उस समय के देशकाल में प्रकट हुए। समय-समय पर संशोधन जरूरी है। प्रवाहमान होना चाहिए। हमारे तलगाजरडा में एक पटेल। त्यारे हुं नानो; मने एम कहे -

अर्क जवास पात बिनु भयऊ।
जस सुराज खल उद्यम गयऊ।।

तो, तुलसीदासजी ने वर्षाऋतु का वर्णन किया है। वर्षाऋतु ही एसी है, कोई कवि उसका वर्णन किए बिना रह नहीं सकता। तुलसी ने वर्षाऋतु का सुंदर वर्णन 'किष्किन्धाकांड' में किया। पढ़ियेगा, एक पंक्ति में- अर्धाली में ऋतु का वर्णन और अर्धाली में ऋत का, उपनिषद् का ऋत का वर्णन। प्रत्येक पंक्ति में यहां ऋतु, यहां ऋत।

घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा।।
दामिनि दमक रह न घन माहीं।
खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं।।

वर्षा के बुंदों का आघात-प्रहार पृथ्वी कैसे सहन कर रही है? जैसे दुर्जन की प्रीत साधु सहन करता है। एक बाजु ऋतु, एक बाजु ऋत। नदियां दौड़-दौड़ सागर में जाय, फिर शांत होती है। जैसे जीव शिव को नहीं मिले दौड़ता

और शिव मिला तो 'शिवोऽहम् शिवोऽहम्।' अद्‌भुत वर्णन! एमां एवुं लख्युं छे, अर्क जवास, आंकडो अने जवासो चोमासामां पांदडां वगरनां थई जाय। चोमासुं आवे एटले पांदडां खरी जाय। घणा उपर कृपानां वादळ वरसे अने फूलेफाले एटले जवासा ने आंकडा जेवा होय ए खरवा मांडे! एम ज्यारे मोज होय त्यारे एक-एक ल्हेर करता होय पण एमांय होय जवासा! कर्णाटकमां आज पण चोमासामां आंकडा ने जवासानां पान खरी जाय छे। जे ते समय पर जे सर्जके लख्युं होय, देश-कालने अनुसार बधुं लखातुं होय छे।

मैं आपसे निवेदन करूं कि कहा हुआ ये सब देखना पड़ेगा, संशोधन जरूरी है। कुछ सूत्र एक काल के लिए बराबर है। इसमें संशोधन भी धीरे-धीरे आवश्यक है। हम बंधियार न हो जाय। तो, विनोबा ने संशोधन किया कि ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या की जगह जगत स्फूर्ति। परमात्मा स्फुरण है। विनोबाजी ये बात करे तो ऋषि नाराज नहीं होता। तो शास्त्र में भी संशोधन जरूरी है। मूल को पकड़कर रोज नए फूल खिलने चाहिए। व्यास कहते हैं, वक्ता दृष्टांत कुशल होना चाहिए। सिद्धांत को समझाने के लिए वो दृष्टांत का आश्रय ले। दृष्टांत के बिना सिद्धांत प्रतिष्ठित करना कठिन होता है। इसलिए बहुत व्यवहारु व्यास ने कहा, वक्ता दृष्टांत कुशल होना चाहिए। धैर्य होना चाहिए। लेकिन मुझे जो शब्द की जरूर है वो व्यास का शब्द है, 'वेद शास्त्र विशुद्ध कृत।'

भारतीय दर्शन बड़ा प्रवाही है। हमारे यहां सात साल का बच्चा हो, उसे यज्ञोपवित पहनाये। लेकिन ये यज्ञोपवित पहनाई उसके बाद ये यज्ञोपवित निकले ही नहीं, निकले ही नहीं, ऐसी जड़ता भारतीय दर्शन में नहीं है। भारतीय दर्शन ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम पूरा होते ही, संन्यास में जाते ही शिखा और सूत्र दोनों फेंकवा देते। अमुक वस्तु शुरूआत में जरूरी है। जो देश यज्ञोपवित पहनाये वही एज देश संन्यास में यज्ञोपवित निकाल देंगे। आज प्रवाही दर्शन उसकी नोंध ले। और मैं कोई ये ना कहूं, लेकिन दर्शनों में एक बात कही कोई काल में निकले नहीं तभी कुछ संघर्ष निर्मित होता है। शोभितभाई तो कहे -

धागा गणतरीना कदी न पहेरीए।
मानवता मात्र आपणुं यज्ञोपवित हो।

जगत स्फूर्ति; और महादेव कहते हैं, जगत सपना। आपणे बधां जाणीए छीए के सपनामां होईए त्यारे गमे एटलो डाह्यो होय एने सपनुं साचुं ज लागतुं होय, ए तो जाग्या पछी कहे, बधुं खोटुं! तो -

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।।

ईश-भजन सारथि तो कौन-सा भजन? भजन मानी क्या? तो शिव से जवाब मिलता है, इश-भजन; हरिभजन। और 'ईश' शब्द शंकर को छूता है, 'ईश' आया तो महादेव के बिना कोई नज़र नहीं आया।

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।

शंकर भगवान भजन की व्याख्या बोल रहे हैं तो वो खुद के भजन की नहीं कहेगा इसलिए वो कहते हैं, हरि भजो। लेकिन राम 'रामायण' में बोलते हैं -

संकर भजन बिना नर मुक्ति न पावे।

चतुष्टघाट के दो परम आचार्य, एक शंकर, दूसरा कागभुशुंडि। मुझे कागभुशुंडि की पीठ ज्यादा अच्छी लगती है, क्योंकि उसमें बोलनेवाला भी पक्षी है और सुननेवाला भी पक्षी है। और पक्षी के दो अर्थ होते हैं। पक्षी मानी जिसको पंख है, जो उड़ान भर सकता है। और पक्षी मानी पक्षपाती। कोई भक्तिपक्ष, कोई ज्ञानपक्ष, कोई योगपक्ष। तुलसी ने बहुत सुंदर पंक्ति की, भक्तिपक्ष रखो, ज्ञानपक्ष रखो, लेकिन हठ मत करो। जिद्द ना करो।

मैं खयाल हूं किसी ओर का,
मुझे सोचता कोई ओर है।
मैं नसीब हूं किसी ओर का,
मुझे मांगता कोई ओर है।

- अहमद फराज़

हिन्दुस्तान की व्यासपीठ पाकिस्तान का भी उपयोग कर सकती है। विज्ञान का पूरा लाभ ले रही है ये मेरी व्यासपीठ ओर लेना चाहिए। संशोधन होना चाहिए। अस्पृश्यता छोड़ो, यही तो है एकत्व।

मैं करीब हूं किसी ओर का,
मुझे जानता कोई ओर है।

सर्जक की पीड़ा देखो! साहित्य की सभी विद्याओं ने आध्यात्मिक क्षेत्र की बहुत सेवा की। और सभी दर्शन प्रवाहमान होना चाहिए। आदमी जाग गया, बात खतम! रहो प्रवाहमान। मुझे डर ये लगता है कि आदमी को आदमी न रहने दिया! इसको हिन्दु कर डाला! इसको मुसलमान, बौद्ध, जैन कर डाला! इसको शीख, इसको इसाइ कर डाला! कल्पना तो करो, ये सब आभूषण है। आभूषण से सुशोभित करो, मार मत डालो! हिन्दु होने का गर्व है। होना चाहिए। क्यों? हम हिन्दु है, लेकिन ये भी याद रखना, ये मेरा अलंकार है। मेरा मज़हब इन्सान है। मैं मानव हूं। मानवता प्रकट करने का ये महाकाव्य है। यहां ईश्वर को प्रकट होना है तो कौशल्या कहती है, शर्त है मानव बनकर आओ।

स्वामी रामतीर्थ जापान की यात्रा में टोकियो में थे। उसके संस्मरण में ये बात लिखी है कि एक रईश का घर जल रहा था और लोग दौड़े! बहुत धनी आदमी था और वो बाहर था और वो आ गया। बोले, सामान निकालो और उनके नौकर-चाकर सहाय करनेवाले सब सामान निकालने लगे। स्वामी रामतीर्थ लिखते हैं, सामान निकालने लगे और वो राजी हो गया। आखिर में याद आया कि मेरा एकलौता बेटा सोया था, वो तो रह गया! हमारा भी ऐसा ही है! रामतीर्थ की डायरी में लिखा है कि हम बचाने में पड़े हैं कि ये निकालो, ये निकालो और चेतना खो गई, खतम हो गई! रामतीर्थ, बादशाह राम

का उर्दू-फारसी-अंग्रेजी पर बहुत कमान्ड था। यंगमेन कोलेज के प्रोफेसर थे। और मुझे आनंद इसलिए है कि रामतीर्थ तुलसी के परंपरा के हैं। गोसांई वंश का बालक है। और इससे भी ज्यादा मुझे खुशी ये है कि स्वामी रामतीर्थ भी इतनी साल पहले ऋषिकेश के कैलास आश्रम में वेदांत पढ़े, जहां मेरे दादाजी रहते थे। दादाजी के पहले, यस। उसका मूल नाम था तीरथराम गोसांई। रामतीर्थ का कलाम है -

जंगल में जोगी बसता है।
कभी रोता है, कभी हंसता है।
मुझे बादल स्नान कराते हैं।
और ये पंछी गीत सुनाते हैं।

इसलिए बादशाह है। अमरिकन लोग जब गालियां देते तो मुस्कुराते! आज बादशाह राम को बहुत पत्थर मारे गये! हम लोगों ने बुद्धपुरुष को कहां जीने दिया है? क्योंकि बहुमती पागलों की है! कभी कोई तुकाराम, कभी तुलसी, कभी एकनाथ, कभी जिसस, कभी नानक, कभी मन्सूर, कभी राबिया। ये सब आये। परंपरा के मूल को तोड़ना नहीं, लेकिन फूल तो नए खिलने चाहिए ही। धर्म हमारा पहला आश्रम है, ध्यान दो। फिर व्यवहार निभाने के लिए अर्थ ये दूसरा आश्रम। फिर जगत ठप्प ना हो जाय इसलिए काम ये तीसरा आश्रम। लेकिन जागने के बाद ये सब छूट जाय ये चौथा आश्रम वो संन्यास।

रामकथा आसुरी वृत्ति से मानवीय वृत्ति में दीक्षित करने की एक फोर्म्यूला है, एक प्रक्रिया है। तो भजन को सारथि बनाना है तो एक भजन-हरिभजन। कागभुशुंडि भी इन्ही टोन में गरुड से बात करते हैं।

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा।
बिनु हरि भजन न जाहि कलेसा।

'खगराज, मेरा अनुभव कहूं कि हरि का भजन सत् है।' दोनों हरिभजन की सीख देते हैं। तो भजन का एक अर्थ, भजन मानी हरि। हरि मानी व्यापक। मेरी व्यासपीठ से यदि आप पूछे तो मैं भजन का यही अर्थ आखिर में करना चाहूंगा कि जीवन जीने का व्यापक दृष्टिकोण भजन है और सारथ्य उसको सौंपो। अपने जीवन की बागडौर उसको सोंपो। 'संकर भजन बिना नर भक्ति न पावही।' राम कहते हैं। तो शंकर भजन वो भी एक भजन। कल्याणकारी प्रवृत्ति; शंकर भजन है। शिव मानी कल्याण। भजन का एक तीसरा सूत्र भी 'मानस' में मिलता है -

मंत्र जापु मम दृढ बिस्वासा।
पंचम भजन सो बेद प्रकासा।।

किसी बुद्धपुरुष का दिया हुआ कोई मंत्र। मंत्र का एक अर्थ मंत्र तो है, लेकिन किसी बुद्धपुरुष का दिया गया कोई सद्विचार, उसको भरोसे के साथ स्मृति में रखना ये भी भजन है। मंत्र यानी वैदिक मंत्र, कोई पारंपरिक मंत्र है ही। लेकिन मंत्र मानी विचार भी। तो, हरिभजन, शंकरभजन, पंचमभजन। तुलसी कहते हैं, पाणी को मंथन करने से घी नहीं निकलेगा, लेकिन मानो निकल भी जाय; रेती को पीसने से कभी तेल नहीं निकलेगा, लेकिन मान लो कभी तेल निकल भी गया, असंभव संभव हो गया। लेकिन 'बिनु हरि भजन न तरहि भव यह सिद्धांत अपेल।' भजन की एक व्याख्या -

तुम्हरे भजन राम को पावै।
जनम जनम के दुख बिसरावै।।

'हनुमानचालीसा' का भजन मानी जागृति, सावधानी, निरंतर स्मृति। स्वाभाविक स्मृति होती है उसको भजन कहते हैं। 'भज् धातु सेवायाम्।' भज् धातु संस्कृत में सेवा के लिए प्रयोजित की गई। दूसरों की सेवा कर पाये तन से, मन से, धन से, सुविचार प्रदान करने से जो अपने पास है उससे दूसरों की सेवा वो भी भजन कहा गया है। तो, धरमरथ के सारथि का नाम है परम का भजन। मेरे अपने लिए जो शब्दकोश है उसमें मेरा प्रियतम शब्द है 'भजन।'

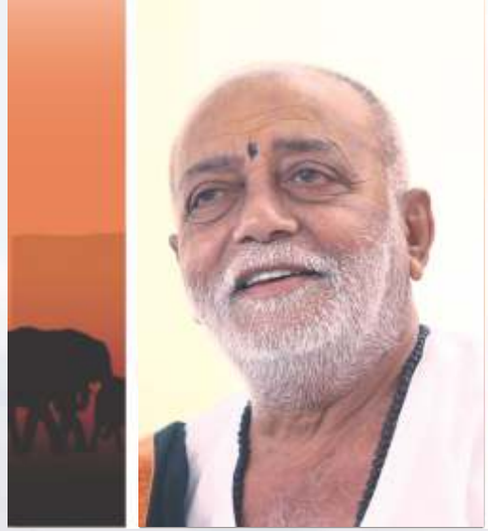

भजनरूपी सारथि हमें सावधान करता है

भजनरूपी सारथि सात दायित्व निभाता है। भजन हमारी इन्द्रियों को संतुलित रखता है। भजन सारथि बने तो हम लक्ष्य चुकते नहीं। भजन सारथि बने तो रथी का ध्यान रखता है। चौथा दायित्व भजनरूपी सारथि भरणपोषण करे। और पांचवां भजन सारथि होता है तब हमें सावधान कर देता है कि छठ्ठा दायित्व है, भजनरूपी सारथि सबको मिला दे। भजन सबको मिलाता है। और भजन जिसके रथ का सारथि हो उसका सातवां दायित्व है, बड़ा प्यारा दायित्व है, भजनानंदी को कलंक न लगने दे। भजन स्वयं कलंक अपने उपर ले।

मैं करीब चालीस साल पहले ऋषिकेश जब गया कथा करने, दूसरी बार पोथी लेकर गया। कैलास आश्रम में एक कुटिया में रहा। मेरा यज्ञकुंड रहता था। रात को जब मन करे मैं अग्नि के पास बैठा रहता। क्योंकि अग्नि जाग्रत रखता है, चाहे वो ज्ञान का हो; चाहे वो विरह का हो; चाहे वो विराग का हो; चाहे वो अंदर से भस्म कर दे एसी कोई रुहानी साहित्य का हो। तीन दिन के बाद एक घटना शुरू हुई। एक फकीर करीब दो बजे कैलास आश्रम के एक छोटे-से दरवाजे से आता था गुमनाम रूप से और मेरी कुटिया में आकर जहां मैं यज्ञ के पास बैठता था, वो मेरे सामने बैठ जाता था! एक-दो दिन आया। दो-तीन घंटा बैठके चला जाता। फिर मुझे प्रतीक्षा रहती थी! वो आया और उसने मौन तोड़ा।

फ़ासलें सदियों के एक लम्हें में मिट जाये।
दिल मिला ले अगर हाथ मिलानेवालें।

शताब्दियों की दूरियां मिट जाती अगर दिल मिल जाता। उसने आज कहा कि बापू, मुझे पता लगा कि आपकी कथा है। तीन दिन से सोच रहा था। कैसे प्रवेश करूं? ये संन्यासी, महामंडलेश्वर, वेदांत-मायावादी की भीड़ और मैं इस्लाम का बंदा। खबर नहीं वो क्या सोचे? तो मैं रात पसंद करता था। लेकिन आज मेरी एक ख्वाहिश है। क्या? उसने जोले से डब्बी निकाली और कहा, मैं आपके अग्निकुंड में थोड़ा लोबान डाल सकता हूं? मेरी आंखें नम हो गई! मैंने कहा, ये अग्नि न हिंदु, न मुसलमान है। पहले कहता तो मैं खुद ले लेता! आप डालिये। मैं

क्यों मेरी बात आपसे शेर कर रहा हूं कि मेरी इस रामकथा के नवदिवसीय प्रेमयज्ञ में कल सायंकाल उर्दू का लोबान डाला जा रहा था। ये तो प्रेमयज्ञ है। और उर्दू अदब के समन्वयवादी शायर दादा हापुडी, मासूमसाहब, परवाज़साहब, विज्ञानव्रतसाहब, दनकौरीसाहब, राज कौशिक, कुंवरसाहब आप सबने लोबान डाला। मुझे महसूस हो रहा था, मेरे प्रेमयज्ञ में आप लोबान डाल रहे थे और गूगल और लोबान की खुश्बू आ रही थी।

तेरी खुश्बू का पता करती है।
मुझ पे एहसान हवा करती है।
मुझको इस राह पे चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझसे जुदा करती है।

इस राह पर क्यों चले साहब, जो हम सबको धर्म के नाम पर, वर्ण के नाम पर, भाषा के नाम पर, जाति के नाम पर, देश के बिलग-बिलग अस्तित्व के नाम पर बिलग कर दे! तो मैं मेरी प्रसन्नता इस अदब के साथ पेश करूं कि आप मेरे सब अज़ीज़ और आदरणीय है। आप सबने आकर लोबान डाला है। एक खुश्बू कायम रहेगी। आप कभी भी मेरे यज्ञकुंड की सरप्राइझ विझिट ले सकते हैं। मेरे यज्ञकुंड के पास लोबान भी होता है, गूगल भी होता है।

एक कहानी है कि राजा ने हुकम किया कि कल पूरे सरोवर में सब दूध डाले और दूध से भरे। रातभर सबने सोचा कि सब दूध डालेंगे तो किसको पता लगेगा हम पानी का एक लौटा डाले तो? और सबने यही सोचा। एक आदमी ने पक्का किया कि मैं दूध ही डालूंगा। उसकी बीबी समझाने लगी कि सब पानी ही डालेंगे! बोले, मेरे एक लोटे दूध से सरोवर का पानी दूध में परिवर्तित ना हो तो मुबारक, लेकिन कम से कम पानी का कलर तो बदल सकता है। ये सभी प्रक्रिया थोड़ा रंग बदलने की है।

जब भी परिवर्तन होगा सत्ता से नहीं होगा, सत् से होगा। परिवर्तन हक्क से होता है, हरामखोरी से नहीं होता। कई सालों से एक विचार पेश किया है कि मुझे मेरी व्यासपीठ लेकर पाकिस्तान जाना है, जब माहौल बने। क्षण-क्षण बदलते माहौल दोनों देशों बीच में, इसमें कब खबर नहीं, लेकिन मेरी व्यासपीठ तैयार है। तब भी मेरा मनोरथ है, हम सब जाये। इसमें जिसमें लूटाया, उसने पाया। क्राइस्ट ने कहा था, जो देता है उसको और दिया जाता है और जो छिपाता है उसका जो है वो भी छिन लिया जाता है।

आसमां से ऊतारा गया है।
जिंदगी देके मारा गया है।

कई चेतनायें आसमां से आई थी, लेकिन मार दिये गए! किसी को हिज़रत करनी पड़ी! किसी को ज़हर! नरसिंह को जेल! क्योंकि ये सब आसमां से ऊतारे गये थे। यहां जो चेतनायें आई वो अकस्मात नहीं है, ये अस्तित्व की व्यवस्था है, तुम जाओ, तुम जाओ। और ऐसा कोई सारथि भारत को मिलता है, जिसको घोड़ें चराने भी आते हैं और चलाने भी आते है। कृष्ण क्यों सारथि हो सकता है? क्योंकि उसको गायों को चराना भी आता था और घोडों को चलाना भी आता था। जीवन का सारथ्य वो कर सकता है जो चराये और चलाये भी। तो, कल की मेरी खुशियां व्यक्त करता हूं। कल जो सूफ़ियानी शराब पीलाई गई, जिसका नशा कभी ना ऊतरे!

कुरुक्षेत्र के धर्मक्षेत्र में भी एक रथ है। जिसका सारथि कृष्ण है। रथी अर्जुन। श्वेत घोड़ें हैं। वहां धर्मक्षेत्र है, यहां धर्मरथ है। मौलिक अंतर है धर्मक्षेत्र का, कुरुक्षेत्र का। जिसका सारथ्य कृष्ण कर रहे हैं वो रथ युद्ध के आरंभ में आया और 'मानस' का ये धर्मरथ करीब-करीब युद्ध के अंत में आया। कुंभकर्ण जा चुका है। मेघनाद वीरगति को प्राप्त कर चुका है। सभी वीर निर्वाण को उपलब्ध हो चुके हैं। धर्मक्षेत्रवाले रथ में अभी रक्त का एक बुंद भी नहीं गिरा था और 'गीता' आई। और रामकथा का ये धर्मरथ जहां धरती लहुलुहाण हो चुकी थी; अंत का अध्याय था तब रथ आया, धर्मरथ-आध्यात्मिक रथ।

धर्मरथ की 'गीता' और 'महाभारत' के रथ। वहां पहले अर्जुन के मन में है कि मुझे स्वर्ग नहीं चाहिए। इन लोगों की हत्या करके स्वर्ग मिले तो भी नहीं चाहिए। 'गीता' के उपदेश में अर्जुन की विरक्ति का पहले दर्शन होता है, बाद रक्त बहा। और यहां ओलरेडी रक्त बह चुका है और विरक्ति आई है। कुछ वैषम्य भी है, कुछ साम्य भी है। 'महाभारत' के कुरुक्षेत्र के रथ का सारथि कृष्ण है, लड़नेवाला अर्जुन है। वहां भगवान लड़नेवाला नहीं है और यहां 'रामचरित मानस' में भगवान ही लड़नेवाले हैं। युद्ध स्वयं ही करनेवाला है। यहां सारथि ईश नहीं, ईश-भजन है।

सारथि के तीन कार्य होते हैं, तीन जिम्मेवारियां होती है। एक, जोते हुए घोड़ें बिलग-बिलग दिशा में बंधन तोड़कर बेफाम चले न जाय वर्ना रथ लड़खड़ाकर गिर सकता है। पहला सारथि का दायित्व है, घोड़े को संभालके रखना। सारथि का दायित्व है, एसी बागडौर थामी रहे कि घोड़ें बिलग-बिगल दिशा में भागे ना। सारथि का दूसरा धर्म है, रथ को लक्ष्य तक पहुंचाये। लक्ष्य विपरीत रथ न जाना चाहिए, ये भी सारथि का दायित्व है। और सारथि का तीसरा दायित्व होता है, रथ में जो रथी बैठा है उसकी किसी भी प्रकार से सुरक्षा करना।

सर्वसामान्य सारथि के तीन लक्षण लेकिन 'महाभारत' में कृष्ण सारथि रहे वो सर्वसामान्य नहीं है, वो ईश्वर है। तो ईश्वर सारथि बने तब पांच दायित्व होता है। आध्यात्मिक अर्थ में घोड़ें यानी इन्द्रियां। 'महाभारत' के घोड़ें अलग-अलग रंग के हैं। प्रत्येक इन्द्रियरूपी घोड़ें चार रंग के होते हैं। कभी-कभी हमारी इन्द्रियां लाल रंग की हो जाती है। आंखें लाल, जुबां लाल, स्पर्श लाल, मन का चिंतन लाल! जो अंत:करण चतुष्टय में, आंतरिक इन्द्रियां जो है। लाल रंग में मानी

प्रेम रंग में! सुनते ही प्रेम प्रकट हो; बोलते ही प्रेम प्रकट हो; स्पर्श से प्रेम प्रकट हो; जुबां से प्रेम प्रकट हो; तब समझना हमारे इन्द्रियरूपी घोड़ें लाल है। लाल रंग का बहुत महत्त्व है। श्याम रंग से सावधान रहना! हमारे गुजराती में लिखा है -

श्याम रंग समीपे न जावुं सखी आज मारे।
एक डरे में रेख न खेचुं भले हसे व्रजवाम।
रखे नयनथी नीर वहे तो संग वहे घनश्याम।

सभी इन्द्रियां जब प्रेमपूर्ण हो तो समझना अपनी इन्द्रियरूपी घोड़ें का रंग लाल है। लाल रंग मस्ती देनेवाला रंग है।

साधु और फ़कीर की व्याख्या ये है जिसकी प्रत्येक इन्द्रियों से जमानेभर के लिए प्यार के सिवा कुछ ना बहता हो; वो ही संत है, वो ही फ़कीर है। जब हमारी प्रत्येक इन्द्रियों का उधामा शांत हो तब ये इन्द्रियरूपी घोड़ें का रंग श्वेत होता है। राबिया को कहा कि बाहर सूरज निकला है। हसन ने कहा, राबिया, बाहर आकर देखो। तो राबिया ने कहा कि मैं अंदर सूरज को देख रही हूं। प्रत्येक इन्द्रियां शांत हो, नेत्र का चांचल्य शांत हो जाय, जुबां मौन धारण करे। कल मैं एक निष्ठा चुक गया था। वो निष्ठा है मौननिष्ठा। नामनिष्ठा, गुरुनिष्ठा, ग्रंथनिष्ठा, मंत्रनिष्ठा, आदि-आदि जो निष्ठा हमें हो; जहां-तहां बकवास मत करना कि ये नाम, ये मंत्र। मेरा गुरु इतना प्रतापी!

इन्द्रियां गलत सोचे, गलत जगह जाने लगे। कपट, क्लेश, कुपथ, कुचाल, दंभ, पाखंड, कुतर्क आदि-आदि का सोचे ना। शांत है तो श्वेत है। लेकिन ऐसे ही बातों में जाय तो समझना, इन्द्रियों के घोड़ें काले होते जा रहे हैं। और जब हमारी इन्द्रियां अच्छी दिशा में जाने लगे, हमारी वाणी परम का कथन करे, हमारे कान परम के वचन सुने, हमारे हाथ शुभ कार्य करे, हमारे पैर अच्छे स्थान की ओर गति करे, जब इन्द्रियां दीक्षित होकर सही में मुड़ जाय तो इन्द्रियरूपी घोड़ें का रंग हरा हो जाता है। फ़कीर लोग हरा कपड़ा क्यों पहनता है? हरा एक मात्र प्रतीक है कि जिसकी नियत लबालब महोब्बत से भर चुकी है, हरी-भरी।

ओशो का निवेदन है। उसने कहा कि कृष्ण के पास दुर्योधन और अर्जुन दोनों गये। जो प्रसिद्ध कथा है युद्ध के बारे में सहाय के लिए। तो दुर्योधन बैठ गया सिर के पास और अर्जुन कृष्ण के चरणों में बैठ गया। दुर्योधन को लगा कि पैरों के पास कैसे बैठे? ओशो ने कहा, अर्जुन जब कृष्ण के चरण में बैठ गया तभी महाभारत का युद्ध जीत लिया! केवल औपचारिकता बाकी थी।

याद रखो, किसी बुद्धपुरुष के चरणों में हम समस्त आकांक्षायें छोड़कर बैठ जाते हैं उसी समय मुक्ति मुठ्ठी में होती है। एक दिन अमीर खुशरो ने निझामुद्दीन पीर को पूछा, 'बाबा, प्रत्येक स्वरूप में मैं आपको बंदगी करते नहीं देखता हूं। ये किया ये किया, जो-जो एक कर्मकांड के रूप में होता है यंत्रवत्! तो बाप, मुझे कई लोग पूछते हैं, तेरे गुरु क्या करते हैं? उसकी दिनचर्या क्या?' 'अमीर, मैं बंदगी भी नहीं करता और कोई कामना भी नहीं करता।' कभी भी किसी से कहीं भी कोई भी कामना न करना इस से बड़ी बंदगी क्या? तो बाप, अमीर को जवाब दिया बादशाह ने -

मेरा सर वहीं झूका है जहां खत्म बंदगी है।

ईश्वर सारथि के दो ओर लक्षण। चौथा दायित्व निभाता है, अपना भरणपोषण वो करता है। और पांचवां दायित्व वो है, सदैव पहले रथी को बिठाता है। जब ईश्वर कृष्ण सारथि होता है और अंत में जब महाभारत का युद्ध पूरा हुआ और ईश्वर जब सारथि होता है तो अर्जुन को कहा, तू अब ऊतर जा। जीव होने के कारण अर्जुन को प्रश्न ऊठा, आज गोविंद ऐसा क्यों करते हैं? कभी-कभी हमारा जीवन जिसके आश्रय में हो वो थोड़ा गुस्सा करे तो दीपावली मनाना! मेरा कोई शुभ होनेवाला है। 'मानस' में लिखा है, जिसका क्रोध भी मुक्ति का मारग है। अर्जुन को तीन बार कहा और रोष में कहा, उतर जा अर्जुन! गोविंद का जो कलेजा था; कौन समझ पाया? भगवान के तले में तीर घूसा। फिर कृष्ण निकालते नहीं। चूभन हो रही है। अस्तित्व ने गोविंद से पूछा कि आप तीर को क्यों निकालते नहीं हो? तो कहा, मेरे शरण आये उस को निकालना मेरा धर्म नहीं है। भले मेरा रक्त बहे। कोई एक बार मुझे पुकारे, कहे, मैं तेरा हूं, पूरी दुनिया को मैं अभयदान देता हूं। तीन बार अर्जुन को कहा, ऊतरजा! अर्जुन को लगा, कुछ राज़ है, ऊतर गया। जैसे अर्जुन ऊतरकर निश्चिंत डिस्टन्स पर खड़ा रहा, उसी समय कृष्ण ने घोड़े की बागडौर फेंककर नीचे छलांग लगाई! रथ भस्म हो गया! फिर कृष्ण ने कर्ण की महिमा गाई।

भजनरूपी सारथि मिले तो पांच नहीं, सात दायित्व निभाता है। जिसने भजन किया उनको सात प्रकार से रक्षा मिले। भजन मानी बंदगी; जो अर्थ लगाओ। तो हमारे जीवन का सारथ्य, सारथिपना जब भजन को सौंप दिया जाय तो वो हमारी इन्द्रियों के घोड़ें को विपरीत दिशा में जाने नहीं देते। तुलसी ने लिखा, हमारी इन्द्रियों में कामरूपी घोड़ा हिनहिनाटी करे तो उसी समय भजनरूपी सारथि ही रोकता है।

रामभजन बिनु मिटहिं कामा।
थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा।।

भूमि न हो तो कभी तरु जम सकता है? वैसे रामभजन के बिना कभी ये घोडा शांत नहीं हो पाता। भजन हमारी इन्द्रियों को संतुलित रखता है। भजन सारथि बने तो हम लक्ष्य चुकते नहीं। भजन सारथि बने तो रथी का ध्यान रखता है। चौथा दायित्व भजनरूपी सारथि का भरणपोषण करे। और भजन सारथि होता है तब हमें सावधान कर देता है कि ऊतरजा। भजनानंदियों को पता होता है, बंदगीनिष्ठ चेतनाओं को पता होता है कि भजन कहां-कहां रोकता है। तो सामान्य सारथि के तीन दायित्व; ईश्वर सारथि बने तो पांच दायित्व। भजन सारथि बने तो ये पांचों तो है, दो ओर। छठ्ठा दायित्व है, भजनरूपी सारथि एक दायित्व पूरा कर देता है कि सबको मिला दे। भजन सबको मिलाता है। ज्यादा कर्मकांड काम नहीं कर सकता, भजन कर सकता है। गुरुनानक ने ये काम किया कि काशी भी गये और काबा भी गये। कबीर ने ये काम किया कि निर्वाण के बाद कुछ फूल हिन्दु भी ले गये, मुस्लिम भी ले गये। साधनासंपन्न साधक ये कर सकता है। क्योंकि भजन ये करा देता है। ये स्वभाव हो जाता है और भजनानंदी पुरुष को कोई व्रत नहीं होता। समाज में किसी से भेद नहीं, एक धागे से सबको पीरोये रखे। भजन टूटने नहीं देगा। भजन यदि आदमी को आदमी से बिलग रखे तो नरसिंह मेहता दलितों के वास में जाके भजन नहीं करता। वह नागर थे। और तुलसी तो कहते हैं, नागर एक ज्ञाति नहीं, वृत्ति है। वाणी की रचना में अतिकुशळ हो तो नागर है। भजनानंदी सबको मिलाता है। नानक ने मिलाया, कबीर ने मिलाया, नरसिंह ने मिलाया। और भजन जिसके रथ का सारथि हो उसका सातवां दायित्व है, बड़ा प्यारा दायित्व है, भजनानंदी को कलंक न लगने दे। भजन स्वयं कलंक अपने उपर ले। बंदगी बोले। और एसी बंदगी जब लगे कि बंदा पर कोइ धब्बा लगनेवाला है तो उसको लगने ना दे और बंदगी स्वयं धब्बों को कबूल करे। भजन भगत को निष्कलंक रखता है। ये सारथि का दायित्व है। सात-सात दायित्व पूरा करता है हरिभजन। इसलिए गंगासती ने कहा, 'जेने सदाय भजननो आहार।' आगे रथ का वर्णन करते हुए तुलसी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा में कहते हैं -

बिरति चर्म संतोष कृपाना।

अब युद्ध के शस्त्र और युद्ध की सुरक्षा के अंगों का वर्णन है। शस्त्र के वर्णन में पहले तुलसी ने ढाल का वर्णन किया। बाद में तलवार का। तुलसी मानते हैं कि प्रहार कब हो, निश्चित नहीं। तुम्हें किसी को प्रहार नहीं करना है, लेकिन कोई तुम्हें प्रहार करे इससे पहले तू ढाल बना ले। ढाल हम समझते हैं, चर्म की होती है और वो चमड़ा बड़ा कठोर होता है। तुलसीदासजी कहते हैं,

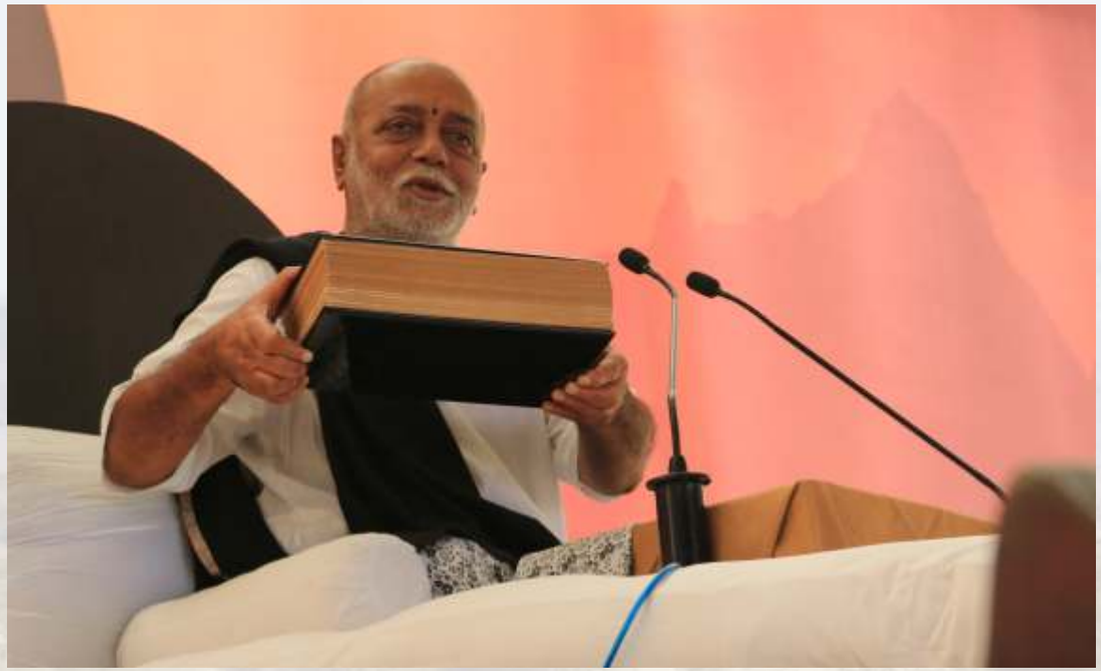

वैराग्य ही ढाल है। वैराग साधक की ढाल है। जिसके पास वैराग की ढाल है उसको काम, क्रोध आदि शत्रु प्रहार नहीं कर सकता। वैराग्य केवल वस्त्र में ना हो, केवल व्याख्या में ना हो; वैराग्य मेरे कपड़े ना हो, वैराग्य मेरी चमडी-चर्म हो। वैराग्य के विचार चर्म तक घूस जाय।

अब धर्मरथ के शस्त्र कौन है? 'संतोष कृपाना।' संतोष कृपाण है। तीर को आप दूर हो तो ही मार सकते हो। निकटवाले को तीर नहीं मार सकते। नजदीकवाले को मारने के लिए कृपाण चाहिए। ऐसा करना नहीं! मैं प्रत्येक देशों को अपील कर रहा हूं, एक पंचवर्षीय योजना ऐसी बनाओ जिसमें कोई शस्त्र की बात ना हो, महोब्बत की बात हो। मेरा बस चले तो यूनो की बिल्डिंग पर लिखवा दूं, 'प्रेम देवो भव।' लोभरूपी दुश्मन हमारा गला पकड़े धर्मरथ में तब तुलसी कहते हैं संतोष की कृपाण, ये मारे इससे पहले भोंक दो! और क्रिपाण को दोनों जगह धार है। संतोष से मारो तो साधक भी धन्य हो जाता है, साधन भी धन्य हो जाता है। दोनों का कल्याण करे उसको कहते हैं संतोष। लोग कहे, मुझे इतने पैसे मिल जाय, फिर संतोष! ये सूत्र ही गलत है। ये नहीं होगा। तुलसीदासजी उल्टी यात्रा कराते लिखते हैं -

बिनु संतोष न काम नसाहीं।
काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं।

साधक, तेरे जीवन में संतोष आ जाय तो कामनायें तेरे दरवाजे खड़ी हो जायेगी। संतोष 'रामचरित मानस' में आठवीं भक्ति है। संतोष क्रिपाण है।

दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा।
बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।

फरसी युद्ध के मैदान का शस्त्र है। कुहाडी का तुरंत परिणाम! तुलसी कहते हैं, धर्मरथ का दान ही फरसा है। दान दो उस समय ही परिणाम। भूखे को भोजन दो और तुम्हारे सामने मुस्कुराये वही परिणाम। निर्वस्त्र को वस्त्र, भूखे को रोटी, दान दिया और परिणाम। लेकिन दान का

अहंकार ना हो। परशुराम ने इक्कीसवीं बार पृथ्वी को नक्षत्री करके दानी को दे दी। वो दानी है और दान का प्रतीक वो फरसा लेकर घूमते हैं। और खुद का नाम परसु से जोड़ दिया, परशुराम। शस्त्र तो मेरा राम भी रखते थे। उन्होंने न कहा कि मुझे 'धनुषराम' कहो! दानी को हंमेशा रहता है कि मेरा नाम, मेरा नाम! दान करे, लेकिन नाम की अपेक्षा न करे। दान एवी रीते कराय जेनी दातानेय ना खबर होय!

धर्मरथ का फरसा है दान और बुद्धि। तुलसी के जीवन में बुद्धि का स्वीकार है। तुलसी बुद्धि को आदर देते हैं, क्योंकि उसको पता है जगदंबा बुद्धिरूपेण है। महाशक्ति बुद्धिरूपेण भी है। बुद्धि प्रचंड शक्ति है। जो एक हथियार-शक्ति है वो बुद्धि है। कृष्ण ने एक बार अर्जुन को कहा, तू बुद्धि के शरण में आ। बौद्धिक उड़ान है उसका स्वीकार करना। बुद्धिशक्ति मातृत्व का संकेत करती है। बुद्धि माँ हो। बुद्धि बाजारु महिला ना हो।

बर बिग्यान कठिन कोदंडा।

रथ में बैठे रथी के पास धनुष होना चाहिए और बाण भी होना चाहिए। श्रेष्ठ विज्ञान कोदंड है, धनुष है। जीवनपर्यंत महामुनि विनोबाजी प्रयत्न करते रहे धर्म और विज्ञान के समन्वय का। श्रेष्ठ विज्ञान का अनादर नहीं होना चाहिए। वो हमारा धनुष है। लेकिन जिस धनुष्य से राम ने रावण को मारा है ये धनुष्य राम के पास आया इससे पहले परशुराम के पास था। परशुराम इस धनुष्य का उपयोग कर लेते तो रावण कबका मर गया होता! लेकिन परशुराम ये धनुष लेकर घूमते ही रहे! विज्ञान भार न बने। विज्ञान उद्धारक हो।

अमल अचल मन त्रोन समाना।
सम जम नियम सिलीमुख नाना।

बाण को रखने के लिए तरकश चाहिए। धनुष को चढ़ाने के लिए तीर चाहिए। निषंग का एक अर्थ होता है असंगता। धर्मरथ का भाथा कौन? तरकश कौन? निषंग कौन? निर्मल और अचल मन ही तरकश। मेरा और आपका मन निर्मल रहे; मेरा और आपका मन स्थिर रहे, उसको तुलसी धर्मरथ का निषंग कहते हैं। हमारे पास विज्ञान का धनुष तो है, लेकिन अचल और निर्मल मन का तरकश नहीं है। कपटमुक्त मन और चंचलतामुक्त मन नहीं है। निर्मल मन होना चाहिए। इसलिए तुलसी कहते हैं, तरकश अमल होना चाहिए। अचलता होनी चाहिए। दोलायमान मन साधक को लक्ष्य तक पहुंचने नहीं देता।

बाण कई प्रकार के होते हैं, इसलिए अचल तरकश में यम-नियमरूपी बाण है। तो निर्मल मन, अचल मन तरकश है। यम-नियम-संजम आदि जो है छोटे-बड़े हमारे जीवन का बाण है, जो विज्ञानरूपी धनुष पर चढ़ाकर आदमी लक्ष्यवेध कर सकता है। आदमी आंतरिक विजय प्राप्त कर लेते हैं।

अब ये सब हो लेकिन युद्ध के मैदान में ऊतरे रथी को, वीर को कवच चाहिए। कवच भी अभेद्य होना चाहिए। तीर लगे, अभेद्य कवच कटे ना। सामनेवाला कितना भी प्रहार करे, कवच जो पहना हो। तो, धर्मरथ का कवच कौन?

कवच अभेद बिप्र गुरु पूजा।
एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।

तेरे गुरु की शरणागति ही तेरा अभेद कवच है। किसी बुद्धपुरुष का आश्रय हमारा कवच है। दृढाश्रय हमारा कवच है। और विप्र। विप्र का अर्थ है यहां जो प्रपंच से विगत है, जिसमें कोई प्रपंच नहीं, जो वेदपाठी है, जो अद्‌भुत विचारों से भरा हो। विप्र का एक अर्थ मेरी व्यासपीठ करती है जिसमें विवेक की प्रधानता हो वो विप्र। अपना विवेक हमारी सुरक्षा है।

कथा के क्रम में चारों भाईयों का नामकरण संस्कार हुआ। वशिष्ठजी के पास विद्या अध्ययन किया। विश्वामित्रजी आये। राम-लखन को यज्ञ के लिए ले गये। यज्ञ पूरा हुआ। भगवान जनकपुर जाते हैं। बीच में अहल्याउद्धार। जनकपुर आये। धनुषभंग किया। जानकी ने जयमाला पहनाई। दूतों को अवध भेजा। महाराज

बारात लेकर आये। और मागशर शुक्ल पंचमी के दिन राम और जानकी का ब्याह हुआ। ऐसे तीनों भाईयों का ब्याह हुआ। जनक ने डबडबाई आंखों से बेटियों को बिदा दी। बारात अयोध्या पहुंची। स्वागत हुआ। दिन बीतते चले। सब मेहमानों को बिदा। फिर विश्वामित्र को बिदा के समय पूरा राजपरिवार रो पड़ा!

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

विश्वामित्र को रघुनाथ के बाप ने एक फकीर को नाथ कहा, 'मैं तो आपका सेवक हूं। हम संसारी भूल जाये, लेकिन आपको साधना में अवकाश मिले तो अचानक आकर हमें दर्शन देना।' विश्वामित्र बिदा हुए। 'बालकांड' पूरा।

'अयोध्याकांड' में वचन की बात, रामवनवास। प्रभु चित्रकूट गए। यहां दशरथ की मृत्यु। भरत पूरी अयोध्या को लेकर चित्रकूट गए। भरत को लौटने की बात हुई। परमात्मा ने पादुका प्रदान की। भरतजी लौट आए। नंदिग्राम में कुटिया बांधकर रहने लगे। 'अयोध्याकांड' पूरा हुआ। 'अरण्यकांड' में प्रभु चित्रकूट तेरह साल रहे। अवतारकार्य का आरंभ किया। अत्रि के आश्रम में आये। अत्रि ने सुंदर स्तुतिगान किया। संतों को मिलते प्रभु आगे बढ़े। कुंभजऋषि के मार्गदर्शन में प्रभु दंडकारण्य में पंचवटी में गोदावरी के तट पर रहने लगे। लक्ष्मणजी ने पांच आध्यात्मिक प्रश्नों पूछे। राम ने उसका उत्तर दिया। शूर्पणखा आई। शूर्पणखा को दंडित किया। खरदूषण को वीरगति प्राप्त हुई। शूर्पणखा ने रावण को उकसाया। रावण ने योजना बनाई। यहां जानकी का प्रतिबिंब रखा। रावण अपहरण करके गया। जटायु ने शहीदी दी। सीता के वियोग में रोते हुए राम जटायु का तर्पण करके भगवान आगे बढ़े। कबंध को निर्वाण देकर प्रभु शबरी के आश्रम में आये। शबरी के सामने नव प्रकार की भक्ति की विद्या का वर्णन। शबरी योगाग्नि में प्रभु के धाम में चली गई। प्रभु पंपासरोवर गये। वहां नारद से संवाद हुआ। 'अरण्यकांड' पूरा हुआ।

'किष्किन्धाकांड' में हनुमानजी के माध्यम से राम और सुग्रीव की दोस्ती। वालिनिर्वाण। सुग्रीव का राज्य। चातुर्मास का वर्णन। उसके बाद सीता की शोध का अभियान हुआ। वयोवृद्ध जामवंत युवराज अंगद और हनुमानजी सब मुख्य-मुख्य दक्षिण दिशा में जाते हैं। हनुमानजी ने प्रणाम किया। प्रभु ने मुद्रिका दी। हनुमानजी ने रामनाम मुद्रिका मुख में रखी। जाते हैं। संपाति मिला और पता चला, सीताजी लंका के अशोकवन में है। जाये कौन? हनुमानजी को जामवंत ने कहा, तुम्हारा अवतार रामजी के लिए हुआ है। और हनुमानजी पर्वताकार हुए।

हनुमानजी जाते हैं। बीच में विघ्न आते हैं। पार करते विभीषण को मिले और आखिर माँ जानकी को मिले। माँ जानकी और हनुमानजी का संवाद हुआ। माँ ने आशीर्वाद दिया। अशोकवन उजाड़ा। लंका जलाई। हनुमानजी लौट आये। प्रभु ने कहा, विलंब ना करे। प्रभु की सेना समुद्र के तट पर आई। रावण के दरबार में खलभली मची! विभीषण ने सीता को लौटाने को कहा। विभीषण को निकाला गया! विभीषण प्रभु के शरण में। भगवान ने शरणागत को रखा। तीन दिन समुद्र के तट पर व्रत किया। समुद्र की शरणागति। सेतुबंध का निर्णय हुआ है और 'सुन्दरकांड' वहां समापन होता है। उसके बाद 'लंकाकांड' में सेतुबंध के बाद पवित्र धरणि पर शिवस्थापना की। सेना पार। सुबेल पर डेरा। ठाकुर ने महारस भंग किया। दूसरे दिन अंगद को राजदूत के रूप में भेजा। रावण माना नहीं। युद्ध अनिवार्य हुआ। कुंभकर्ण, इन्द्रजित का निर्वाण हो गया। रावण आया और विभीषण भए अधीरा। हे महाराज, कैसे जीतोगे? और राम ने कहा, हे विभीषण -

सुनहु सखा कह कृपानिधाना।
जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।

प्रभु का धर्मरथ तैयार हुआ। रावण को कल मारेंगे। आज की कथा को विराम।

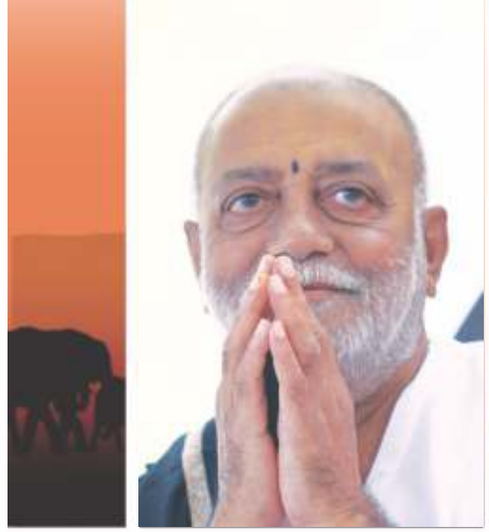

गुरु ही हमारा अभेद्य कवच है

जिसकी चेतना इस अस्तित्व के पांच तत्त्वों से जुड़ी हो उसको बुद्धपुरुष समझना। अग्नितत्त्व से जो संबंध रखे। और अग्नि है प्रकाश का प्रतीक। अग्नि है पवित्रता का प्रतीक। दूसरे पवन से जुड़ा हुआ हो। पवन मानी हनुमान, पवन मानी प्राणतत्त्व। तीसरा आकाशतत्त्व। आकाशतत्त्व से जुड़ा हुआ मीन्स सीमाओं में न बंधा हुआ हो; असीम हो। चौथा जो जलतत्त्व से जुड़ा हो, जिनकी आंखें कायम भीगी हो। वो आंखें साधना से भरी हुई हो। और जिसका पृथ्वीतत्त्व से नाता हो। ऊंचाई कितनी ही मिले, लेकिन धरा छोड़े ना। ये पांचों तत्त्वों से जो जुड़े हैं उसको गुरु समझना।

कल हमने कथा के केन्द्रबिंदु धर्मरथ तक उड़ान भरके कथा को पहुंचा दी थी। लेकिन इस धर्मरथ के कुछ उपसंहारक सूत्रों की चर्चा करूं इससे पहले, भगवान राम और रावण का घमासाण युद्ध होता है। बड़ा संघर्ष हुआ। मेरी एक बात यदि आपके दिल तक पहुंचे तो, घर्षण उष्णता ही पैदा करता है, उष्मा पैदा नहीं कर सकता। विश्व को चाहिए उष्मा महोब्बत की, रेहमत की, शराफ़त की। चंदन की शीतल लकड़ियां जिसके गर्भ में और अगल-बगल में शैत्य छिपा है, फिर भी रगडने से आग उगलती है। ये दुर्भाग्य विवाद-अपवाद से दुनिया को क्या मिला? इसलिए मेरे गोस्वामीजी ने बहुत उपकार किया कि उसने चार संवाद की स्थापना की। ज्ञान में भी संवाद हो। बिलग-बिलग उपासना पद्धति में भी संवाद हो। विविध क्षेत्र में भी संवाद हो। किसी के चरणों में दृढाश्रय में भी घर्षण ना हो, संवाद हो।

बाप, युद्ध है बहाना कुछ कहने के लिए। और बार-बार राघव ने उसके दस सिर, वीस भुजायें काटी। नहीं मरता है। गुलाब के पौधें से फूल चुन लो, दूसरे दिन नये आ जायेंगे। उपर से फूल चुनने से फूल का आना-विकसना बंद नहीं होगा। प्रहारें जब मूल में होंगे तभी ये विकृतियों का नाश होगा। हम उपर-उपर से चुन लेते हैं और एक रात के लिए तसल्ली कर लेते हैं! ठाकुर ने इकत्तीसवां बाण रावण की नाभि में मारा। नाभि मानी मूल। मूलाधार कहते हैं, तंत्र में भी, योग में भी। ब्रह्म से कोई बात अजान नहीं है। ब्रह्म को किसको मारना है, किसके साथ संघर्ष करना है, सब पता है। 'मानस' में तो लिखा है, एक

भृकुटिभंग से सृष्टि का समापन हो सकता है! लेकिन विभीषण की राय ली, तेरा भाई मरता क्यों नहीं है? तब विभीषण ने कहा, महाराज, रावण की नाभि में पीयूषकुंभ है, अमृततत्त्व है। इस अमृत का जो तत्त्व छिपा है इसको जब तक नहीं फ़ोड़ोगे तब तक वो मरेगा नहीं। अब ठाकुर ने इकत्तीसवां बाण चढ़ाया। धरती कांपने लगी, क्या होनेवाला है! परमात्मा के धनुष से इकत्तीस लहलहात सांप उड़े! दस सिर, वीस भुजा, इकत्तीसवां मूलाधार में! रावण धरती पर गिरा और जीवन में पहली बार और अंतिम बार बोला, राम कहां है? बोलना जब आखिर में निकल जाय इसका क्या मतलब? आखिर में ही मूल बात निकले कि आदमी ने दबाया क्या रखा है? मेरी और आपकी तरह वो माला लेकर जप नहीं करता था। लेकिन ये अमृत क्या था? रामनामामृत। वो अंदर से जपता था।

आज किसी ने पूछा है कि रावण का ब्रह्मत्व क्या था? रावण का ब्रह्मत्व ये था। रावण नाभि में रामनाम रखता था। हमारी तरह जूबां पर नहीं, होठों पर नहीं। ईश्वर का नाम या तो हृदय में रखना। शास्त्र में भी यही कहा है। लेकिन ये आदमी ऊलटा है। उसने रामनामामृत नाभि में छिपा रखा। तो फिर हृदय खाली है? नहीं। हृदय में जानकी को रखा। यही रावण का ब्रह्मत्व है। जानकी ब्रह्म है। एक ही ब्रह्म ने दो रूप लिया था। एक ही ब्रह्मत्व पुरुष के रूप में राम का रूप लेके आया था। एक ही ब्रह्मतत्त्व नारी के रूप में जानकी बनकर आया था। जल और तरंग दो बोले जाते हैं, तत्त्वत: एक है। वैसे सीता-राम दोनों तत्त्वत: एक है। रावण नहीं मरता था, इसका कारण है हृदय में जानकी थी। राम भी सोचते उनके हृदय में बाण मारूंगा तो रावण का तो नाश होगा, लेकिन जानकी भी चली जाएगी!

मेरा मत है, रावण प्रति कोई ऐसा-वैसा मत मानना। रावण होना नहीं चाहिए। होने का तुम सोचो, तो हो भी नहीं सकते! रावण रावण है। मंदोदरी आदि सब आई। रावण का आखिरी सास जानेवाले है तब प्रभु ने लक्ष्मण को कहा, लक्ष्मण, यदि राजनीति सीखनी है तो दशानन आंखे मुंद ले इससे पहले इसके पास जाकर थोड़ी राजनीति सीख ले। और लक्ष्मण जाता है। लखन आकर रावण के सिर पास खड़े हैं और दशानन पूछते हैं, रामानुज, आपकी आने की वजह क्या है? बोले, मुझे राम ने भेजा है, मैं तुझसे कुछ नीतियां सीख लूं। रावण ने कहा, आप आये हैं, स्वागत है। लेकिन आप मेरे मुख से कुछ अच्छे बचन सुनने के अधिकारी नहीं है। अपने अस्तित्व का गौरव उसने बताया। मैं अधिकारी नहीं? बोले, आप लायक नहीं हो, सद्बोध के लिए पात्रता चाहिए। लखन राम के पास आया, प्रभु, आपने मुझे ये काम क्यों करवाया? रावण ने मुझे गेरलायक समझा! लखन, तू गया तो खड़ा कहां रहा था? बोले, मस्तक के पास। ज्ञान लेना है तो शरण के पास खड़ा रहना चाहिए। जा दूसरी बार। दूसरी बार आया। चरण में खड़ा रहा, 'दशानन, मैं चरण में खड़ा हूं अब तो बताओ। क्यों जिद कर रहे हो?' 'जाईये।' फिर लक्ष्मण को लौटाया गया!

लक्ष्मण को लगा, अब सीमा की बाहर बात है! भगवान से कहा, आप क्यों परेशान कर रहे हो? ये दूसरी बार आया, निकाल दिया! कौन वजह होती है? राम भी चिंता में! तब हनुमानजी ने लक्ष्मणजी को कहा, रामानुज जिसके पास बोध लेना हो उसके पास रिक्त हाथ नहीं जाना चाहिए। कुछ लेकर जाओ। अब रणमैदान में क्या लेकर जाय? बोले, हनुमान, एक दुर्वा भी नहीं मिलती! मैं क्या लेकर जाउं? हनुमान ने कहा, अशोकवाटिका में रही जानकी के आंसू से जो दुर्वा हुई है वो लेकर जाओ। लक्ष्मण वो लेकर जाते हैं, फिर रावण राजनीति का उपदेश लक्ष्मण को देता है।

सच्चा विचार दुश्मनों से मिले तो भी ले लेना और बुरे विचार मित्र से मिले तो मुंह मोड़ लेना। मंदोदरी आई और राम की स्तुति की।

जान्यो मनुज करि दनुज कानन दहन पावक हरि स्वयं।
जेहि नमत सिव ब्रह्मादि सुर पिय भजेहु नहि करुनामयं।

'पतिदेव, मैं आपको कहकर थक गई! फिर भी आपने राम को मनुज माना? ये तो हरि स्वयं है। जिसको ब्रह्मादि देवता नमन करते हैं, आपने उसको कुछ नहीं समझा! फिर भी मैं जानती हूं। आपके संग रही हूं। प्रतिपल आप परद्रोह में बीताते थे, फिर भी राघव तुम को अपना पद दे रहा है। ऐसे राम को मैं प्रणाम कर रही हूं।' रावण के चेहरे के तेज ने गति की और परमात्मा के चेहरे में रावण का तेज समा गया। मानो तेज का राम में जाना राम ने रावण को कबूल किया। ये ही था रावण का ब्रह्मतत्त्व। देवताओं ने स्तुतियां की। रावण की स्थूल क्रिया हुई। विभीषण को राजतिलक हुआ।

उसके बाद राम भगवान हनुमानजी से कहते हैं कि तुम जानकी को खबर करो। सीताजी को खबर दी गई। उसी समय जानकी अग्नि में समा चुकी थी 'अरण्यकांड' में। सीताजी पुन: अग्नि से प्रकट हुई। और जैसे सागर लक्ष्मी विष्णु को दे; हिमाचल पार्वती शंकर को दे ऐसे अग्नि ने जानकी आज राम को समर्पित कर दी। अग्नि शुद्धता का प्रतीक है। उसके बाद सबकी विदा हो गई और विभीषण को कहा, जल्दी करे। यदि गिनती में एक दिन की देर हो जाय तो मेरा भरत जीवित नहीं रहेगा!

पुष्पक विमान तैयार होता है। और विमान में भगवान जानकी के संग बिराजमान हुए हैं। प्रभु ने जानकीजी को सेतुबंध दिखाया। राम वहां अपना कर्तृत्व कहते हैं, मैंने यहां शिव की स्थापना की। शिव मानी कोई हिन्दु-मुस्लिम नहीं। शिव का अर्थ होता है कल्याण। मैनें यहां कल्याण राज्य की स्थापना की। कल्याण राज्य लंका की ओर स्थापित किया जहां अकल्याण के सिवा कोई सोच नहीं थी! विमान शृंगबेरपुर आया। चौदह साल से राम की प्रतीक्षा करते अंतिम लोग, वंचित लोग प्रतीक्षा में दिन गुजारते थे। प्रभु विमान से नीचे ऊतरे। केवट ने प्रभु के चरण पकड़ लिए। प्रभु गले लगाते हैं, केवट, उस समय तूने गंगा पार करवाया, तूने ऊतराई ना ली। तूने कहा, चौदह साल के बाद आओगे तब जो दोगे, ले लूंगा। वादा आध्यात्मिक होता है। निष्काम वादा ही कायमी होता है।

रोके जमाना चाहे रोके खुदाई
तुम को आना पड़ेगा।
जो वादा किया हो निभाना पड़ेगा।

'महाराज, आपने वादा निभाया!' 'केवट, बोल क्या दूं?' केवट रो पड़ा! 'ठाकुर, ये तो मेरी योजना थी ताकि दूसरी बार दरस पाउं!' ठाकुर ने आग्रह किया तब केवट बोले, देना हो तो मैंने आपको नौका में बिठाकर पार करवाया, आप मुझे विमान में बिठाकर अयोध्या ले चलो। सबको साथ लिया। वहां 'लंकाकांड' समाप्त हो जाता है।

'उत्तरकांड' के आरंभ में अयोध्या के विरह का वर्णन। आज राघव ना आये तो अवध का क्या होगा? तुलसी कहते हैं, विरह सिंधु में भरत डूबने को ही थे उसी समय अचानक कोई कस्ती मिल जाय, कोई सफ़ीना मिल जाय, ऐसे भरत के सामने हनुमानजी आये। 'भरतलालजी, राघव सकुशल अवध आ रहे हैं, ऐसी परमपावन खबर देनेवाले आप कौन हो?' जीवन में पहलीबार हनुमान ने अपने मुख से अपना नाम कहा है -

मारुतसुत मैं कपि हनुमाना।
नामु मोर सुनु कृपानिधाना।।

'मैं पवनपुत्र हनुमान आपको प्रणाम कर रहा हूं।' हनुमान को गले लगाया। और भरतजी दौड़े! पवन से भी तीव्रगति से बात फैल गई! हनुमानजी ने फिर उड़ान भरी ठाकुर के पास कि अब विलंब ना करे बाकी अयोध्या को जीवित रखना मुश्किल है। विमान से भगवान ने तीरथराज प्रयाग को प्रणाम किया। सरयू को प्रणाम किया। विमान नीचे ऊतरा और मित्रों के साथ राम ऊतरे तब जो सखा के रूप में बंदर बैठे थे; असुर के रूप में विभीषण बैठा था,

लेकिन अयोध्या की भूमि पर ऊतरे तब सबने मनुष्य शरीर धारण किये। रामकथा ये मानव बनाने की फोर्म्यूला है।

प्रभु ने जन्मभूमि को प्रणाम किया। भरत दौड़े। ठाकुर ने सीने से लगा लिया। ठाकुर ने गुरुदेव के चरण पकड़े। हथियार छोड़ दिये। वहां घटना घटी है। इसलिए मैंने तलगाजरडा के राम मंदिर से भगवान राम की मूर्तियों से हथियार हटवा दिये। मेरे गांव के मंदिर में राम के हाथ में धनुषबाण नहीं है। मैंने कहा, हे ठाकुर, ये पचपन साल से तेरा गाना गाता हूं, अब तो हथियार छोड़! मेरे विश्व को, मेरे मूलक को, मेरी प्यारी पृथ्वी को हथियार की जरूर नहीं। ओपरेशन बाद डोक्टर भी ओपरेशन ओजार, ड्रेस छोड़ देते हैं। विनोबाजी कहते हैं, लडाई दो धर्मों के बीच नहीं होती। दो अधर्मों के बीच होती है।

आग अपने ही लगा देते हैं।
गैर तो सिर्फ़ हवा देते हैं।

अपनों ने ही अपनों को मारा है साहब! तो मूल बातें निर्भीक होकर जिसने धरापे की है उनको या तो हिजरत करनी पड़ी है या तो शहीद होना पड़ा है। करबला के मैदान में जो शहीदी हुई। बहत्तर लोग मारे गये! एक मरे या एक लाख मरे, मारने की वृत्ति खराब है। कुरबानी को गणित से साथ क्या लेना-देना? तो, मेरा एक नम्र निवेदन जब हम एक बनकर मंच से पुकारते हैं सब, तब मैं कहता हूं कि आत्मा न हिंदु होती है, न मुसलमान होती है। लेकिन मेरे हृदय में रही आत्मा जिसको हम चेतना कहते हैं वो ये कहती है, वो बहत्तर नहीं थे, वो बेहतर थे। प्लीज़, उसको संख्या में न लो।

फूल के पास गुफ्तगू करनी है तो बिना शस्त्र करो। ये दुनिया बड़ी मासूम है। हमारी कौन माने लेकिन बीज तो बोओ? कभी न कभी फल मिलेगा। न मिले तो भी कोई बात नहीं। हमने तो हमारा काम किया। हमारे कृष्ण ने हमको समझाया है, 'मा फलेषु कदाचन।' तू

तारा दायित्व निभा। फल को मारो गोली! रस मिले। रस मिलना चाहिए। फल के बाद रस मिले। हमको तो पहले मिल गया। हमको रस चाहिए। भारतीय वेद ने कहा है, 'रसो वै सः।' रस ही परमात्मा है। तो, प्रभु ने गुरु के चरण पकड़े। आशीर्वाद प्राप्त हुआ। सबको मिले। भगवान को लगा, आज व्यक्तिगत गले नहीं लगाउं तो उसको तसल्ली नहीं मिलेगी। प्रभु ने ऐश्वर्यरूप दिखाया -

अमित रूप प्रगटे तेहि काला।
जथा जोग मिले सबहि कृपाला।।

परमात्मा ने अमित रूप धारण कर के जिसका जैसा भाव था ऐसे परमात्मा उसको मिले। राम सबसे पहले कैकेयी के भवन जाकर माँ से मिले। ग्लानि से भरी जननी रो पड़ी! 'माँ, तूने मुझे वन नहीं भेजा होता तो भाई कैसा होता है उसकी मुझे खबर कैसे होती? पुत्र के प्रति पिता का क्या प्यार होता है, मुझे कभी नहीं पता होता। पत्नी कैसी होती है ये पता नहीं लगता और दुश्मन कैसा होता है ये भी पता नहीं लगता। तुने मुझे वन नहीं भेजा होता तो सेवक कैसा होता ये भी पता नहीं लगता।' सुमित्रा के पास गए। कौशल्या के पास आते राम, लक्ष्मण और जानकी ने प्रणाम किया।

भगवान वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों से पूछा कि आज ही राजतिलक किया जाय? सबने कहा, अब कल का भरोसा न किया जाय। राम ने तीनों भाईयों को स्नान करवाया। राम ने स्वयं स्नान किया। चौदह साल पहले जो वस्त्रालंकार धारण करने थे वो धारण किये। राम सिंघासन के पास नहीं गये, वशिष्ठजी ने दिव्य सिंघासन मंगवाया। भगवान राम ने पृथ्वी को प्रणाम किया। सूर्य को प्रणाम किया। देवताओं को, माताओं को, गुरुदेव को और जनता को प्रणाम करके राम दिव्यसिंहासन पर बिराजमान हुए और त्रिभुवन को रामराज्य देते हुए वशिष्ठजी ने राम के भाल में पहला राजतिलक किया -

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

राजतिलक हुआ और त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। प्रेमराज्य का स्थापन हुआ। उस मंज़र को देखकर माताओं ने आरती सजाई। बार-बार आरती उतारी। उस समय राम ने इतना धन दिया कि याचना करनेवाले को अयाचक किन्हा। सत्ता इसको कहते हैं कि प्रजा को कभी याचना न करनी पड़े। याचनावृत्ति खत्म कर दी। ये तो कोई देखता नहीं, क्योंकि मर्म गुरुवाणी से निकलता है। महादेव आये दरबार में और स्तुति करते हैं -

जय राम रमा रमनं समनं।
भव ताप भयाकुल पाहि जनं।
अवधेस सुरेस रमेस बिभो।
सरनागत मागत पाहि प्रभो।।

पाओगे और शायद मुल्क लौट सको कि ना लौट सको, अल्लाह जाने। और कहते हैं, रास्ते में ही सिकंदर मर गया। तो, रामराज्य, प्रेमराज्य में फकीरों को ही रुचि है। महादेव आये। शिव ने स्तुति करके कैलास की ओर गति कर दी। भगवान ने सखाओं को निवास दिया। छ महिने के बाद अपने मित्रगण जो आये थे उसको विदा देते हैं एक हनुमानजी के सिवा। समयमर्यादा पूरी होते जानकी ने पुत्रों को जनम दिया। वैसे तीनों भाईयों के घर दो-दो पुत्र हुए। रघुवंश के वारिस का नाम देकर तुलसी ने रामकथा विराम कर दी। फिर सीताजी के वनवास आदि विवादी प्रसंग को तुलसी 'मानस' में लेते नहीं। तुलसी कहते हैं, एक बार सीताराम दिल के सिंघासन पर बैठ जाय तब मुझे संवाद के सिवा कुछ करना ही नहीं है।

रामकथा हकीकत में यहां विराम लेती है। उसके बाद खगराज भुशुंडि के पास आते हैं। भुशुंडिजी अपना पूरा जीवन चरित्र कहते हैं। आखिर में सात आध्यात्मिक प्रश्न पूछे जाते हैं, जो 'मानस' के सात सोपान का सार है। और सात प्रश्नों के उत्तर देकर भुशुंडि ने गरुड को कहा, आपको अब कुछ सुनना है? बोले, बाबा, आपने मुझे भर दिया! बार-बार प्रणाम करके गरुडजी वैकुंठ गए। नीलगिरि पर्वत पर कथा ने विराम लिया। यहां याज्ञवल्क्य महाराज ने तीर्थराज में भरद्वाजजी

को कथा सुनाते विराम दिया कि नहीं, प्रश्न है। महादेव कैलास पर से कथा को विराम देते हैं। पार्वती की आंखों में आंसू है, 'महाराज, मैं कृतकृत्य हो गई!' प्रेम और अध्यात्म में तृप्ति होती ही नहीं, तृषा ही होती है। और शरणागति की पीठ पर से संवाद कर रहे कलिपावनावतार गोस्वामी तुलसीदासजी अपने मन को कथा सुनाते हुए कथा को विराम देते समय कहते हैं कि जिसकी छोटी-सी कृपा से मेरे जैसा मतिमंद तुलसीदास आज परमविश्राम को प्राप्त हो रहा है। चारों आचार्य ने कथा को विराम दिया। इन चारों आचार्य की छाया में बैठकर इस केन्या की भूमि पर मैं मेरे शब्दों को विराम की ओर ले चलूं इससे पूर्व -

कवच अभेद बिप्र गुर पूजा।
एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।

धर्मरथ की चर्चा करते भगवान कहते हैं, रथी को कवच चाहिए। गुरु का आश्रय, किसी बुद्धपुरुष का आश्रय, पहुंचे हुए किसी फकीर का आश्रय ये हमारा कवच है। इकत्तीसवीं तारीख को गुरुपूर्णिमा है। तलगाजरडा में गुरुपूर्णिमा का उत्सव नहीं मनाया जाता। जो आना चाहते उसको सविनय कहता हूं कि वहां कोई उत्सव नहीं, क्योंकि मैं किसीका गुरु नहीं हूं, मैं किसीका बंदा हूं। हां, मेरे गुरु है, मेरे पघडीवाले बाबा जिसने मुझे ये संपदा दी। उसका शागिर्द बनने जी जाउं तो भी काफ़ी। मेरा कोई पंथ नहीं, संप्रदाय नहीं। सत्य मेरा धर्म है, महोब्बत ही मेरा पंथ है। मेरे लाखों श्रोता है। मज़बूरसाहब कहा करते थे -

ना कोई गुरु, ना कोइ चेला।
अकेले में मेला, मेले में अकेला।

गुरुपूर्णिमा को मैं वैश्विक दिन कहता हूं। जगत के हरेक बुद्धपुरुष को आज केन्या की व्यासपीठ से मैं प्रणाम करता हूं। सभी चेतनायें विस्तरित हो और मुखर हो क्योंकि गुरु कौन है? गुरु हमारा कवच है। प्रश्न ये आता है कि गुरु कहे किसको? पांच वस्तु से जो कायम संबंध रखता हो उसको गुरु मानना। जिसकी चेतना इस अस्तित्व के पांच तत्त्वों से जुड़ी हो उसको बुद्धपुरुष समझना। अग्नितत्त्व से जो संबंध रखे। जिसका अंदर का अग्नि कायम प्रकट हो। और अग्नि है प्रकाश का प्रतीक। अग्नि है पवित्रता का प्रतीक। और अग्नि साधक को जागरूक रखने का बहुत बड़ा काम करे। दूसरे पवन से जुड़ा हुआ। पवन मानी हनुमान, पवन मानी प्राणतत्त्व। वायु को न हिन्दु कहोगे, न मुसलमान कहोगे। क्योंकि जीवित रहने के लिए सबको वायु लेना पड़े। वायु बिनसांप्रदायिक है। और जो असंग होता है वो ही सबमें फैलता है। जो चेतना वायुतत्त्व के साथ जुड़ी हुई हो उसको बुद्धपुरुष समझना। तीसरा आकाशतत्त्व। आकाशतत्त्व से जुड़ा हुआ मेरी दृष्टि में बुद्धपुरुष मीन्स सीमाओं में न बंधा हुआ। असीम हो। चौथा जो जलतत्त्व से जुड़ा हो, जिनकी आंखें कायम भीगी हो। वो आंखें साधना से भरी हुई हो, बंदगी से भरी हुई हो। जलतत्त्व से जुड़ा बुद्धपुरुष। फकीर की आंखें भीगी हो। और जिसका पृथ्वीतत्त्व से नाता है। ऊंचाई कितनी ही मिले, लेकिन धरा छोड़े ना। पंख कितने भी मिल जाय, पृथ्वी से ऊपर उठकर फूलाये ना। अहंकार नहीं। ज़मीन से पैर सटे रहे। ये पांचों तत्त्वों से जो जुड़े हैं उसको गुरु समझना और ऐसा गुरु ही हमारा अभेद्य कवच है।

बनी घटना है। स्वामी रामतीर्थ ब्रिटन से आ रहे थे हिन्दुस्तान। स्वामी रामतीर्थ जहाज में चढ़ने जा रहे थे तो कप्तान था उसने स्वामीजी के बारे में सुना था तो कहा, स्वामीजी पधारिए। आज बहुत बड़ा योग बन गया कि हिन्दुस्तान पर शासन करनेवाला अंग्रेजों का कोई वाईसरोय इसी जहाज में इन्डिया जा रहा है। बादशाह राम ने कहा, कौन जा रहा है? स्वामीजी निकल गए! कप्तान बोले, जहाज छूटनेवाला है! जाने दो, क्योंकि एक जहाज में दो बादशाह नहीं जा सकते! फ़कीरी का ये आलम होता है। अभिमान नहीं, ये महोब्बत की मस्ती है। ऐसा कोई सद्गुरु बुद्धपुरुष हमारा कवच बन सकता है।

कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहिं सम बिजय उपाय न दूजा।।
सखा धर्ममय असरथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके।।

'हे विभीषण, ऐसा धर्मरथ जिसके पास है उसने जीतनेवाला कौन दुश्मन पैदा करे?' शुरू हुआ था, 'सुनहु सखा कह कृपा निधाना' से और धर्मरथ पूरा हुआ -

सुनि प्रभु बचन बिभीषन हरषि गहे पद कंज।
एहि मिस मोहि उपदेसेहु राम कृपा सुख पुंज।।

ये नव दिन की कथा का जो ईकठ्ठा हुआ आनंद मैं किसको अर्पण करूं? मैं दिल से आप सब को साथ लेकर ये नव दिन की रामकथा का आनंद विश्व के तमाम बुद्धपुरुषों को, ईकत्तीस को गुरुपूर्णिमा है इसलिए एडवान्स में सद्पुरुषों को, बुद्धचेतनाओं को समर्पित करता हूं, आप कुबूल करो। और विशेष रहमत करो कि दुनिया से नफरत चली जाये। दुनिया के हाथ में शस्त्र नहीं, शास्त्र आ जाये। और जागने के बाद वो भी छूट जाये। आप भी अकेला नितांत शुद्ध-बुद्ध हो जाये। इसलिए मैं गुरुजनों को विश्वभर के संतों को मेरी ये नव दिन की कथा समर्पित कर देता हूं।

मानस-मुशायरा

अच्छा तुम्हारे शहर का दस्तूर हो गया।
जिसको गले लगाया वो दूर हो गया।
– बशीर बद्र

मेरे राहबर मुझको गुमराह कर दे।
सुना है कि मंज़िल करीब आ रही है।।
– खुमार बाराबंकवी

अपना चेहरा देख न पाए,
औरों को शीशा दिखलाये।
इस दुनिया में कौन बुझाये,
जब पानी ही आग लगाये!
– जमील हापुडी

यूं तो मैं सुक्रात नहीं था,
ज़हर बचा था क्या करता?
– विज्ञानव्रत

मैं खयाल हूं किसी ओर का,
मुझे सोचता कोई ओर है।
– अहमद फराज़

उसे किसने इज़ाज़त दी गुलों से बात करने की।
सलीका तक नहीं जिसको चमन में पांव रखने का।
– मासुम गाज़ियाबादी

जो बांटता–फिरता था जमाने को उजाले,
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।
– दीक्षित दनकौरी

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी–सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें और होती है।
– राज कौशिक

कभी ज़मीन कभी आसमां–सा लगता है।
वो एक शख्स जो मुझको खुदा–सा लगता है।
– अमितोष शर्मा

क्वचिदन्यतोऽपि

सर्जक में विचारनिष्ठा, वचननिष्ठा, वर्तननिष्ठा, विवेकनिष्ठा और विश्वासनिष्ठा होती है

नरोत्तम पलाण अभिनंदन ग्रंथ 'श्वेतकेशी मितर' के लोकार्पण प्रसंग पर मोरारिबापू का प्रासंगिक उद्‌बोधन

मुझे ऐसा लगता है कि मैं कुछ भी बोलूं इससे पहले वरिष्ठजन के पांव छू लूं। अदालत में कोई निवेदन करना हो तो 'गीता' हाथ में रखकर अथवा 'गीता' पर हाथ रखकर कहते हैं, जो कुछ बोलूंगा सच बोलूंगा। ऐसी प्राचीन पद्धति अपनाई जाती है। उसी तरह अभी मैं कुछ कहूंगा, 'श्वेतकेशी मितर' को हाथ में रखकर वह सत्यनारायण की साक्षी में सच कहूंगा। आप सभी मेरे प्रति आदर व्यक्त करते हैं पर व्यक्तिगत तौर पर तलगाजरडा के एक साधु के रूप में मेरे वंदनीय माता-पिता, मंच पर उपस्थित स्वामीजी महाराज, पूजनीय स्वामीजी महाराज, जिन्होंने गुणातीत श्रद्धा से ग्रंथ का संपादन किया है ऐसे दो संपाकश्री, गुरुजनश्री, ऐसे कितने ही ग्रंथ जीने के लिए जल्दबाजी नहीं करते पर प्रकट होने के लिए उत्साही होते हैं और इसमें जिनका बहुत बड़ा योगदान रहा है ऐसे 'प्रवीण प्रकाशन' के गोपालभाई, विवेकमयी विद्वत्ता के साथ जो करे, कहे ऐसे मेरे नीतिनभाई; कारीआसाहब ने सुंदर स्वागत प्रवचन किया और डोक्टर साहब बहुत हंसाते है; डोक्टर तो हंसता हुआ ही रहना चाहिए। यदि वह हंसता नहीं है तो वह भगौडा है! अल्लाह करे उनका दवाखाना खाली

रहे! यह शाप नहीं है। साधु शाप नहीं देता और यदि दे भी तो फलता नहीं। साधु का शाप फलित हो तो साधुता को लज्जित होना पड़े। आदरणीय गुणवंतभाई शाह कहते हैं जिस दिन शिक्षक हंस न सके उस दिन सी.एल. ले ले। उसी तरह डोक्टह हंस न सके तो उसे हीरा घिसने का व्यवसाय शुरू करना चाहिए। भिखुदानभाई भी साथ में है। इन दो दिन की यात्रा में हम बारबार बापा को याद करते रहे। मायाभाई भी साथ में है। पूरा काफ़िला है।

आपने कहा कि सुन्दरम् के शब्द 'श्वेतकेशी पितर' इसका आपने मितर किया। मुझे पता नहीं था कि सुन्दरम् ऐसा बोल गए हैं। मेरे मन में, द्वारिका से निकला तब बिजली कौंधी और मैंने मोती पिरो लिया। मुझे यही कहना है। पर सुन्दरम् ओलरेडी यह कह गए है इसका मुझे आनंद है। सादर इतना कहूंगा कि ये जगत के लिए श्वेत मित्तर होंगे पर मेरे लिए तो श्वेत पितर ही है। उपनिषद कहते हैं, 'पितृदेवो भव।' मेरे गुरु की कृपा से, हनुमानजी के आशीर्वाद से और आप सबके छलकते हुए सद्भाव से रामकथा गायक के रूप में लगभग पूरी दुनिया घूम आया हूं। साहब, मैंने पहली बार बिना दाढी का ऋषि यहां देखा है। इनके श्वेत केश सबको पसंद है। मुझे तो इन बालों में ऊंगलियां फेरनी की इच्छा होती है! पर पुत्र पिता के बालों में ऊंगलियां फेरे यह अच्छा नहीं लगता! पोरबंदर समुद्री इलाका है और साहब! समुद्र के फेन श्वेत होते हैं। कई समुद्र देखे हैं। पानी का रंग बदलता रहता है। कहीं अति श्याम, कहीं नीलवर्ण, कहीं ऊथला तो कहीं श्वेत होता है। अपने यहां सप्तसिंधु की परिकल्पना है। कितने ही प्रकार के पौराणिक समुद्र के उदाहरण हम दे सकते हैं। पर यह श्वेत केश, पोरबंदर का गरजता समंदर सदाबहार है। उसकी तरंगें, मौजें, लहरें श्वेतकेशीय है। आनेवाली पीढ़ी मंथन कर बताएगी कि इसमें कितने रत्न है, यह बाहर निकालकर बताएगी।

मेरी दृष्टि से यह नगरी काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। मैं चाहे जैसा भी हूं, शब्दोपासक हूं। मुझे पता है शब्द ब्रह्म का भी प्राकट्य कर सकता है और भ्रम का भी। मैं ब्रह्म के रूप में शब्द स्थापित नहीं करना चाहता। न तो भ्रम के रूप में। पर इस नगरी के प्रति किसे ममता नहीं हो सकती? प्रारंभ में ही नीतिनभाई ने विश्ववंदनीय पुरुष का स्मरण किया महात्मा गांधीबापू का। मैं पूज्यभाई श्री के हरिमंदिर में या किसी एवार्ड समारंभ या कथा में, याद नहीं पर यह मुद्दा बोला हूं कि इस नगरी में गांधीबापू जैसे महान सत्योपासक प्राप्त हुए हैं, सत्यम् तो थे ही पर मेरी दृष्टि से शिवम् सुदामा मंदिर है। ब्राह्मण कर्म है पूरे जगत का कल्याण करना, शुभ करना और सुदामा जैसा जगत का शुभ करनेवाला और कौन हो सकता है? हमारे यहां युवा कथाकार भाविन पाठक युवा है, शिक्षित है, उत्साही है। वह कवि नहीं है पर लिखता है। कोशिश करता है। तुलसीदासजी ने 'उत्तरकांड' में ऐसा लिखा है कि कवि कलियुग में काफी प्रकट होंगे। यह बात सत्य करना अपना धर्म है! युवा भाविन ने कहा, 'बापू, मैं कवि नहीं हूं पर दो पंक्तिया कहता हूं।' मैंने कहा, बोल भाई। उसने कहा कि हमारे लिए वह सुदामा है पर वह तो अपनी अदा में है। साहब, बिना अदा के सुदामा अच्छा नहीं लगता। उसकी अपनी अदा है।

मोरारिनी पासे कंई नव माग्युं,
ए जी धन धन धन्य एनी धारणा ...

यह उनकी अदा थी। छोटी गली, छोटा मोहल्ला, छोटा-सा घर। पूतलीबाई और गांधीबापू; वह सत्यम् मंदिर है। सुदामा का मंदिर शिवम् है। सुंदरम् मंदिर हरिमंदिर है। सांदीपनि में भाईश्री ने जो मंदिर किया वह मेरी दृष्टि से सुंदरम् है। यूं तो मुझे गांधीजी के कारण पसंद है और किसे पसंद न हो? मैं व्यवस्ता या प्रतिकूलता के कारण न जा सकूं। बाकी मेरा नियम है कि पोरबंदर से निकलते समय गांधी स्थानक जाकर चरणस्पर्श करूं। फिर सुदामाजी का चरणस्पर्श करूं। समय रहे तो हरिमंदिर जाऊं। यह नगरी सत्यम्-शिवम्-सुंदरम् की पताका लहराती है। वह मेरा व्यक्तिगत मत है।

नीतिनभाई की बात करूं वो उनको अच्छा न लगे। हम दुनिया में रहते हैं। मुझे भी कई बातें पसंद नहीं आती पर पसंद करनी पड़ती है। नीतिनभाई का वाक्य है, वे कई बार चिठ्ठी या काव्य भेजते हैं। आठ-दस पंक्तियां होती है। अभी जो पत्र भेजा उसमें वे लिखते हैं, प्रशस्ति ठीक नहीं है पर प्रतीति होने पर कहना ही चाहिए। 'ए रत आवे अने न बोलिए तो हैयाफाट मरां।' मैं यहां बापा की प्रशस्ति करने नहीं पर मुझे जो प्रतीति हुई है वह कहने आया हूं। आप जो ठीक समझे। मेरे लिए यह बिना दाढी का ऋषि है। देवर्षि, ब्रह्मर्षि कितने हैं? मैंने एक शब्द उत्पन्न किया है। सप्तर्षि के ब्रह्मर्षि, राजर्षि जो है। और पूज्यभाई के यहां तो इन तीन-तीन नामों से एवॉर्ड दिए जाते हैं। मेरे लिए यह ऋषि प्रेमर्षि है। यह न तो देवर्षि न तो राजर्षि है। राजर्षि हो तो हमारे साथ न बैठे। मेरी दृष्टि से ये प्रेमर्षि है। इनके ग्रंथ का लोकार्पण हो रहा है। ऐसे सुनहरे अवसर पर सत्यम्-शिवम्-सुंदरम् नगरी में आने का यह मेरा प्रवास नहीं, यात्रा है। ऐसी यात्रा करने मैं आया हूं। साहब, मैं इनका चरणस्पर्श करता हूं। इनके लिए प्रतीतियां कहने लगूं तो इनको और मुझे पसंद नहीं आयेगी।

अभी साहित्य जगत में 'शरणशीलता' शब्द प्रचलित हुआ है। मैं भी प्राथमिक शाला में टीचर था। मास्टरी की है। तो, मुझे पता है। आज कल सभी जगह साहित्यकार और यह शरणशीलता की आलोचना होती है! विनोद जोशी ने सुंदर जवाब दिया कि मैं अपनी श्वास के शरण हूं, क्या यह कोई गुनाह है? मैं श्वास के शरण न रहूं तो जीवित न रहूं। एक साहित्यकार शब्द की शरण में न रहे तो फ़िर मरण ही रहता है! सबके अपने-अपने विचार है। इस देश में वाणी स्वातंत्र्य है। पर इस बापा को, नगीनबापा को, नीतिनबापा को भी पता नहीं होगा। अब थोड़ा-थोड़ा पता है। पर मेरे कारण सबको कितकितना सहन करना पड़ता है। ये लोग सोचते हैं, इस साधु का संग क्यों किया?

यह सत्यनारायण का मंदिर है। इनके ट्रस्टी यहां बैठे हैं। पूजारी भी है। मैंने दर्शन किए हैं। यह प्रोग्राम यहीं होना चाहिए। सत्यनारायण के मंडप में ही होना चाहिए। ये सब जोग, लगन, दिन, तिथि है। वर्ना पोरबंदर में कितने सारे होल है! चाहे खाली रहते हो! पर इसी स्थान पर कार्यक्रम होता है। ऋषि का कार्यक्रम यहीं पर होना चाहिए। नीतिनभाई विवेकशील व्यक्ति है। इन्होंने कहा कि एक साधुपुरुष द्वारा एक विद्यापुरुष का सन्मान है। 'साधुपुरुष' शब्द मुझे पसंद है। मैं ऐसा बनने की पूरी कोशिश करूंगा। पर ऐसा कहा जाता है कि साधु के दोनों व्यर्थ हो गए लेकिन साधु का संग करे उसके तीनों व्यर्थ हो जाते हैं! आप पूछेंगे साधुबावा के कौन से दो व्यर्थ हुए? इसकी व्याख्या आप कीजिएगा। मैं साधुबावा न कहूं हां, मुझे मेरी अपनी अस्मिता है। आप लोग कीजिए न! नरसैयो कह गया -

एवा रे अमे एवा रे, तमे कहो छो वळी तेवा रे।
भक्ति करतां भ्रष्ट थईशुं, तो करीशुं दामोदरनी सेवा रे।

हम साधुबावा है। हमारे दोनों व्यर्थ हुए! क्या वो मैं जानता हूं। वो कबीरा बिगड़ा तो मैं भी बिगड़ा। दूध में जामन हो और दूध बिगड़ा ऐसा नहीं है। मिट्टी के चक्के जैसा दूध दहीं हो जाय। उसमें से मक्खन भी निकले। उसमें से जामखंभालिया में घी हो दानेदारऐसा घी बने! जामखंभालिया में घी का बड़ा व्यापार है! आज जो रोटी आयेगी उसमें यहां का घी होगा न! अच्छा, अच्छा। आज जो धर्म की शरण में जाने लगे हैं तो इस बापा को कितना सहना पड़ा है! रमणबापा पाठक, रेशनालिस्ट! अब 'केडा नोखा कागडा...' अब उसका मार्ग कहां जाय? मैं संपूर्ण गुणातीत आस्तिक, विशेषणमुक्त आस्तिक और रमणबापा बिलकुल रेशनालिस्ट! फिर भी साथ बैठकर बातें कर सकते हैं। तो, साधुबावा का संग करे उसका तीनों बिगड़े! साधुबावा के कौन-से दो बिगड़े यह मुझे पता है पर मैं आपको कहूंगा नहीं। कबीर को बेकार पंडितों ने कहा, 'कबीरा बिगड़ गया!' पर छोड़ो इस बात को। पर साधु से जुड़े तो तीनों बिगड़े! मैं इसकी व्याख्या करना नहीं चाहता। परमात्मा करे भले तीनों बिगड़े, उस पर तैतींस करोड देवता तृप्त हो जाय। शरणशीलता की बात आती है तो क्या

नरोत्तमबापातलगाजरडा आए यह शरणशीलता है? पिता क्या पुत्र के घर न जाए? क्या इसमें पिता बुरा हो गया? नीतिनभाई आए, रामकथा का संपादन करे 'स्वान्तः सुखाय।' अभी हाथ में ग्रंथ है, सत्यनारायण का मंदिर है; देव दिखता नहीं पर दर्शनार्थी दिखाई देते हैं। आपको न दिखे पर मैं सामने देख रहा हूं। तो 'मैं कहता निजनयन की देखी।' परमात्मा की कृपा से साधु की शरण कोई न जाय। इसका गौरव है। पर क्या साधु को यह हक भी नहीं कि वह उनकी शरण में जाए? क्या मुझे इतना भी हक नहीं कि मैं किसी अच्छे उपन्यास का प्रोक्षण करूं? क्या मुझे यह भी हक नहीं कि विवेचकों ने दो आंतरिक सूत्र दिए है तो उसका सत्कार करूं? क्या मुझे इतना भी हक नहीं कि इतने बड़े खोजी मानव, समुद्र जैसा विशाल मानव के पास बैठकर उनकी बातें सुनूं? यह उनकी नहीं, मेरी शरणशीलता है। यह रेकडर्ड प्रवचन आगे जाने दीजिए।

बारडोली की कथा के समय, नीतिनभाई, रमणलाल बापा के लिए तो ऐसे शब्द कहे गए कि वे मोरारिबापू की गोद में बैठ गए! ऐसे शब्द योग्य है? वे मेरी गोद में नहीं, मैं इनकी गोद में बैठा हूं। मेरा देश, मेरा वेद ऐसा सीखा गए हैं, मेरी पूरी पीढ़ी ऐसा सीखा गई है, 'आनो भद्रा क्रतवो।' आपको जहां-जहां से सत्य मिले स्वीकार कीजिए। यह सारी उपेक्षा यह छूआछूत, अस्पृश्यता देश में कहां तक? ईश्वर इससे बचाए। असभ्य अस्पृश्यता तो क्षमायोग्य है। पर तथाकथित सभ्य अस्पृश्यता! इससे परमात्मा हमें मुक्त रखे! पर 'शरणशीलता' शब्द का मैं स्वागत करता हूं। मेरे शब्दकोश में एक शब्द जुड़ा। कच्छ के गांव की हाईस्कूल के भूमिपूजन के अवसर पर रास देखने के बाद के.का.शास्त्री ने कहा कि इस देश में मेरा बस चले तो मैं बटालियन स्थापित करूं। इनके रास और कला की शरण में तलगाजरडुं जाए तो क्या यह अपराध है? इनकी रेन्ज तो देखिए साहब! कौन-सी अश्पृश्यता? कोई अच्छा स्वर, कविता, साहित्य; मैं अमुक धर्म के नाम लेना नहीं चाहता। वे अपने सीमित वर्तुल में ही रहे हैं! उससे बाहर नहीं निकल पाए हैं! परदेश का साहित्य, कला, आकाश की तरह फैले होने चाहिए। ऐसे संकीर्ण वर्तुळ खड़े न करे। आदमी की परख निकटता से होती है। यों ही मनगढन्त निवेदन नहीं करने चाहिए। सभी समान नहीं होते।

तो मैं पोरबंदर क्यों आया? यूं तो मुझे जाना था। यहां से गुजरना था। कहना चाहता था कि बापा अनुकूल हो तो हम द्वारिका मिले और दो दिन आनंद करे। लेकिन बापा ने कहा, यह ग्रंथ; पर मैंने कहा कि बापा, आपत्ति न हो तो मैं ही मैं आ जाऊं। बात स्वीकृत हुई। मैं शब्दों का खेल नहीं खेलता! यदि ऐसा करूं तो मुझे सरस्वती शाप दे, साहब! अभी मुझे बोलना है। काफी बोलना है। नुक्सान क्यों करूं? ये दो तो बिगड़े अब और नहीं बिगाडनी है! दो कौन-से बिगडे इस राज़ को राज़ ही रहने दीजिए!

घीर आई है शाम यारो, चलो मैकदे चले।

सत्संग के मेले में जाना शरणागति नहीं है। हो भी तो 'प्रनत कुटुंबपाल रघुराई।' भगवान शुकदेव कहते हैं, एक बार आप परमतत्त्व की शरणागति 'सर्वभुतेभ्यो' इस भय से मैं तुम्हें मुक्त कर दे। 'न अभयम् सर्वभुतेभ्यो ध्यामि येतद् वचनं मम।' ऐसा कहते। कहने का अर्थ यह है कि शरणशीलता की व्याख्या बाकी है। वो दो क्या बिगड़े? आपको यह कथा और भी सुननी पड़ेगी। शायद इस जन्म में न बोलूं तो न भी बोलूं! मैं किसी के बंधन में नहीं। न बोलूं तो न भी बोलूं। अगले जन्म में भी हमें कथा ही करनी है। आप भी आईए। पूर्व निमंत्रण है।

शरणशीलता क्या है? साहब, बिना शरण के जिन्दा नहीं रह सकते। बापा की प्रशस्ति में बहुत कुछ कहने की आज इच्छा होती है। खाना-पीना पूरा हो गया है। एक बजे कार्यक्रम पूरा करना है। घडी जेब में रखता हूं। दूसरी चीज कंधी जेब में रखता हूं, जिसकी अब कोई जरूरत नहीं! जरा भी इसकी उपयोगिता नहीं है! बचपन से आदत है। परस्पर छूटती नहीं! इस पर आप सोचिएगा, इसे रखने की क्या जरूरत? जिसके दोनों बिगड़े हो उसे होश नहीं रहता कि मैं क्या रखूं? इसमें कहां संगति है? एक जेब में घडी और एक में कंधी। इसका कोई मेल नहीं। कविता की तुल कहां बैठती है? साहित्य का अनुबंध कहां बैठता है? यह प्रशस्ति नहीं, प्रतीति है। यह प्रतीति ऐसी है कि कोई भी सर्जक उसे पता हो या न हो पर मानों कि कभी शब्दसेवन करते-करते उसे भी भूल जाय ऐसी स्थिति आ जाय तब सर्जक में मैंने मेरी तलगाजरडी आंखों से जो दिखता है इसमें पांच वस्तु है। जो इस ग्रंथ में है। सर्जक में प्रथम वस्तु विचारनिष्ठा होती है। हम भी लिख सकते हैं। मैं लिखने बैठूं तो सात-आठ पन्ने लिख डालूं। इन पन्नों में ह्रस्व-दीर्घ की आठसौ गलतियां निकल सकती है! फिर तो ऊंझा की हिज्जे की रीति आई उसने मुझ पर बहुत उपकार किया। ह्रस्व-दीर्घ इ ई, उ ऊ को मारो गोली! दे धनाधन यार! लिख सकते हैं पर विचारनिष्ठा नहीं मिल सकती। विचारनिष्ठा तो गांधीजी के सत्याग्रह में से मिले। किसी भी सर्जक-विद्वान में प्रथम वस्तु विचारनिष्ठा होती है। मैं हृदयपूर्वक कहता हूं कि मुझे इस ऋषि में विचारनिष्ठा दिखाई दी है।

त्रिवेणी में एक बार हमारे कथाकार संमेलन में बोले। मैं उस समय निजी आंतर्दर्शन करता था कि इन्होंने कथाकारों को कितना अद्भुत मार्गदर्शन दिया! विचारनिष्ठा के बाद है वचननिष्ठा। तीसरी निष्ठा है वर्तननिष्ठा। आदमी का आचरण, बोडी लेंग्वेज और आंखें पूरा जीवनदर्शन करा देती है।है! इतनी बड़ी सेवा, फिर भी विवेकपूर्णता! मेरा तुलसी कहता है, 'बिनु सतसंग बिबेक न होइ।' चौथी विवेकनिष्ठा है। उन्हें अच्छा लगे इसलिए नहीं कहता। पर उनकी शब्दसेवा, उन्हें भावि पीढ़ी को जो दिया

यह वन डे है! टी-ट्वेन्टी नहीं। इन्होंने संतों पर, साहित्य पर काम किया। पुरातत्त्व पर किया। वचनबिन्ठा, विचारनिष्ठा, विवेकनिष्ठा हो। वर्तननिष्ठा हो। परंतु जिसे विश्वास में निष्ठा न हो साहब, उनकी चारों निष्ठाएं सूख जाती है। अब 'विश्वास' शब्द को तो गालियां दी जाती है कि अंधविश्वास! किसी ने गुजराती साहित्य में कहा कि अंधविश्वास जैसा बोलता है! उसे इतना कहिए कि अंध को विश्वास न हो तो क्या हो? वो बेचारा दीवार के सहारे जाता हो उसे विश्वास होता है कि आगे दरवाजा आयेगा। विश्वास तो शंकर का पर्याय है। अंध को भी होना चाहिए। अतः अंध को विश्वास न हो तो क्या हो? विश्वास निष्ठा किसी परमतत्त्व में। चलिए तत्त्व छोड़ दे। किसी परम खोज के प्रति, किसी परमशब्द के प्रति, किसी परमपंक्ति के प्रति उनकी विश्वास निष्ठा होगी, तभी तो आप सबको संपादन करने की इच्छा होती है। वर्ण गोरा, वस्त्र श्वेत और बाल भी श्वेत पर मुझे लगा कि काली शाल है तो यह सब मेचिंग नहीं होगा! मैं सबको काली शाल ही देता हूं। मुझे तो एक कविराज ने कहा, बापू आपने एकसौ आठ दी है ऐसे ताने मारते हैं! जयंतीभाई ने कहा, काली शाल तो हमारे पास है ही पर श्वेत शाल! शाल तो एक प्रतीक है। मैंने दो-चार साल से कहना शुरू किया है कि अब हम शब्दोपासक, सूरोपासक, प्रवचनकार, मंचस्थ महानुभवों को शाल देना बंद कर दे और मशाल देना शुरू कर दे। तो साहब, यह मशाल पकड़िए और इस मशाल में शायद हाथ जल जाय तो आप व्रज की गोपी मानी जाय और नरसिंह मेहता की तरह महाराज के सदस्य मानियेगा। 'यारो, घीर आई है शाम, चलो मैकदे चलें।' यह मयकदा माने शराबखाना नहीं!

यारो, घीर आई है शाम, चलो मैकदे चलें।
याद आ रहे है जाम चलो मैकदे चले।
साकी है शराब है आज़ादियां भी है।
है सबकुछ इन्तज़ाम चलो मैकदे चलें।

(नरोत्तम पलाण अभिनंदन ग्रंथ 'श्वेतकेशी मितर' के लोकार्पण समारोह पोरबंदर (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक: १८-८-२०१५)

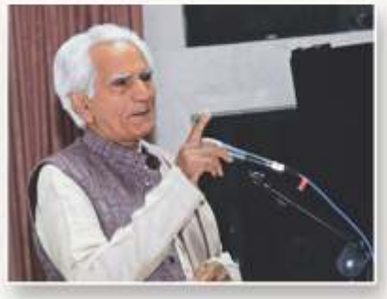

रघुवीर चौधरी

सुमन शाह

जय वसावडा

भाग्येश ज्हा

विनोद जोशी

माधव रामानुज

हर्षद त्रिवेदी

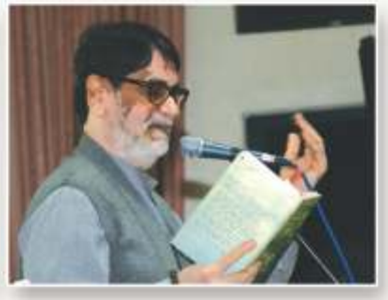

हरिश्चन्द्र जोशी

नीतिन वडगामा

प्रणव पंड्या

शोभित देसाई

मिलिन्द गढवी

प्रो. वसीम बरेलवी

डो. कुंअर बैचेन

विज्ञानव्रत

दीक्षित दनकौरी

जमील हापुडी

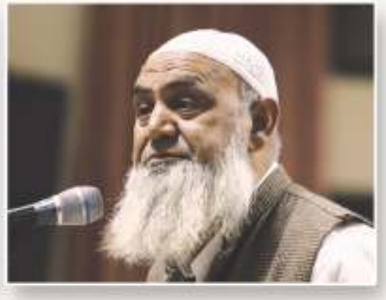

अंदाज़ दहेलवी

डो. विजेन्द्रसिंह परवाज़

राज कौशिक

मासूम गाज़ियाबादी

मिर्ज़ा आरिफ

शरफ़ नानपारवी

अमितोष शर्मा

हकादान गढवी

भरतदान गढवी (रंघोळा)

अनुभा गढवी

मोरारदान गढवी

हरेशदान सुरु

राजभा गढवी

हरेशदान नारायणस्वामी

बिरजु बारोट

मथूर कणझारिया

पीयूष महाराज

रणजितभाई वांक

परसोत्तम परी

घनश्याम लाखाणी

जितेन्द्र गढवी

माधुभाई लच्छीवाळा

भारतीबेन कुंचाला

भारतीबेन व्यास

चेतन गढवी

दिगुभा चुडासमा

भरतदान गढवी (गोंडल)

गंभीरसिंह गोहिल

मुन्नाबापु

हरदेव आहीर

कान-गोपी रासमंडली (पोरबंदर)

सांध्य-प्रस्तुति

लाभुभा भासळिया

भीखुदान गढवी

कीर्तिदान गढवी

मायाभाई आहीर

देवराज गढवी (नानोडेरो)

जगमाल बारोट

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा । देखि बिभीषन भयउ अधीरा ।।
अधिक प्रीति मन भा संदेहा । बंदि चरन कह सहित सनेहा ।।
नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना । केहि बिधि जितब बीर बलवाना ।।
सुनहु सखा कह कृपानिधाना । जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना ।।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका । सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ।।
बल बिबेक दम परहित घोरे । छमा कृपा समता रजु जोरे ।।
ईस भजनु सारथी सुजाना । बिरति चर्म संतोष कृपाना ।।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा । बर बिग्यान कठिन कोदंडा ।।
अमल अचल मन त्रोन समाना । सम जम नियम सिलीमुख नाना ।।
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा । एहि सम बिजय उपाय न दूजा ।।
सखा धर्ममय अस रथ जाकें । जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें ।।

॥ जय सीयाराम ॥